ISSN : 2277-4963

VIKAS INTERNATIONAL JOURNAL MANAGEMENT HUMANITIES SCIENCE & TECHNOLOGY

(Peer Review Indexing with Impact Factor)

VIKAS PUBLISHER'S & DISTRIBUTORS

Vikas International Journal of Management, Humanities, Science & Technology
Head Office: A-5, Christian Colony, Patel Chest, University of Delhi, Delhi - 110007
Mob.: 9455251733, 9918156392, Website: www.theyugantar.in
Email: akhilesh_tiwari1979@yahoo.com, santoshtiwari05712@gmail.com

Volume – 13
Year 2022

"Vikas International Journal"
(A Peer-Reviewed Research Journal)

ISSN : 2277-4963

Chief-Editor	:	Santosh Kumar Tiwari
Managing Director	:	Prof. H.S. Dhami, Garhwal University, Vice Chancellor
Editorial-Board	:	Prof. R.C. Tripathi, Gramoday University, Chitrakut
Managing Editor	:	Dr. R.K. Shukla, Invertis Univeristy, Barelly, UP
Editors	:	Prof. I.D. Tripathi, Gurughansidas University, C.G. Dr. O.P. Tripathi, Dr. C.V. Raman Univeristy C.G. Dr. Manoj Pandey, Amity University, Gwalior Dr. Mahendra Singh Meena, University of Kota, Rajasthan Dr. Chandra Jeet Singh, University of Kota, Rajasthan Dr. Seema Dadhich, Jodhpur, Rajasthan Prof. Kalpana Rai, Gujrat Dr. Sangeeta Singh, C.V. Raman University, C.G. Prof. Bhagwant Singh, Pandit Ravi Shankar Shukla University Raipur C.G. Prof. Umesh Kumar Singh, Vikram University, Ujjain Dr. D.K. Pandey, Ambedkar College, Delhi
Advisory Board	:	Dr. S.K. Srivastava Additional Director Amity University, (U.P.) Prof. Praful Dhar, PIMB, Pune
Foreign Editorial	:	Prof. Indra Bhat, Tokyo Prof. Dr. Hideaki Ishida, Daito Bunka University, Japan Prof. Roanna Mghomare, California Univeristy, U.S.A. Prof. Anita Kapoor, U.S.A.

NOTE: T*he Editor and the publisher do not claim any responsibility, liability for statements made and opinions expressed by author(s).*
@VIJMST
Subscription and sending articles to be addressed to (Only Soft copy of articles is accepted).

Editor-in-Chief
Vikas International Journal of Management, Humanities, Science & Technology
Head Office: A-5, Christian Colony, Patel Chest, University of Delhi, Delhi - 110007
Contact: +91-99181 56392, +91-94552 51733
Email: santoshtiwari05712@gmail.com Website : http://theyugantar.in

"Vikas International Journal"
(A Peer-Reviewed Research Journal)
ISSN: 2277-4963

CONTENTS

S.No.	Subject	Page No.
1.	छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य में जनजातीय लोकपर्व– डॉ. द्वारिका प्रसाद चन्द्रवंशी	7-10
2.	भारत में राज्य राजनीति की प्रवृत्तियां एवं स्वरूप – दुर्गा खत्री	11-12
3.	Termal Environmental Pollution Dr. Vandana Kumari	13-16
4.	समकालीन कविता में सामाजिक राजनैतिक चेतना के विकास में प्रतिनिधि रचनाकार का योगदान – डॉ. गणेश लाल निनामा	17-19
5.	कबीर का दर्शन – डॉ. कृष्णा मल्हान	20-23
6.	बस्ती और अपराध – डॉ. हेमलता महावर	24-26
7.	Oxidation of Thiourea by Pyridinium Chlorochromate in Aqueous DMF Medium: A Kinetic and Mechanistic Study - Munna Lal Meena	27-35
8.	Corporate Social Responsability: from Emergence to Present Scenario - Preeti Shukla	36-42
9.	Title of the paper: Climate Resilient Water Management and Application of Smart Water Technique - Dr. Monica Ahlawat*[1] & Dr. Debasri Mukherjee[2]	43-54
10.	आधुनिक परिप्रेक्ष्य में पुस्तकालय विज्ञान का महत्व – मदन पाल – डॉ. (प्रो.) सुधीर त्यागी	55-58
11.	वाल्मीकीय रामायण में अलंकार–प्रयोग–डॉ. मोहन लाल मेघवाल	59-62
12.	Diasporic Reinvention in the Plays of Djanet Sears - Dr. Manisha Sharma Pandey	63-68
13.	'शृंखला की कड़ियाँ' और स्त्री स्वाधिकारों का विमर्श – डॉ. लालचंद सिन्हा	69-72
14.	Local Memories 0f Partition Among Second-Generation Families in North India - Mahima Kamboj	73-75

छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य में जनजातीय लोकपर्व

– डॉ. द्वारिका प्रसाद चन्द्रवंशी
सहा. प्राध्या. हिन्दी
शासकीय नवीन महाविद्यालय, पाण्डातराई,
जिला–कबीरधाम (छत्तीसगढ़)

प्रस्तावना –

लोकसाहित्य की दृष्टि से यदि छत्तीसगढ़ की ओर दृगपात किया जाय तो छत्तीसगढ़ प्रदेश बेहद समृद्ध है। यहाँ की लोकसाहित्य रूपी सरिता कल कल निनाद करती हुई आदिम युग अप्रतिहत अब तक प्रवाहमान है। यहाँ का लोकसाहित्य यहाँ के प्रत्येक निवासी के सभी कार्यकलापों, क्रिया विधियों, त्योहारों, उत्सवों एवं जीवन के सभी पहलुओं में दृष्टिगोचर होता है, क्योंकि लोक साहित्य का संबंध ही लोक या साधारण जनता से होता है। यहाँ का लोक साहित्य तो लोक की विविध विधाओं का निश्छल, निर्द्वन्द्व एवं लाग लपेट रहित स्वच्छन्द अभिव्यक्ति है। यहाँ की संस्कृति, परंमरा एवं रूढ़ि में लोकसाहित्य संपूकत है। यहाँ के समृद्ध एवं विपुल लोकसाहित्य के आधार पर ही छत्तीसगढ़ की पहचान करने वालों ने छत्तीसगढ़िया सबले बढ़िया" का अनोखा नारा दिया है।

छत्तीसगढ़ लोकसाहित्य की अभिवृद्धि में यहाँ की जनजातियाँ की भी अपनी अहम भूमिका है। यहाँ की जनसंख्वया की एक। तिहाई जनजातियों की ही है, जो अपनी विविध कलाओं, परंपराआं, एवं लोकपर्वों के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। प्रस्तुत शोध आलेख में इन्हीं जनजातियों के प्रमुख ली कपर्वों परे प्रकाश डाला गया है।

उद्देश्य –

इस शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य की श्रीवृद्धि में यहाँ के जनजातियों के लोकपर्वों के योगदान पर प्रकाश डालना एवं इनके पर्वों से सुधी पाठकों को परिचित करानी है।

शोध प्रविधि –

इस शोध आलेख में मैंने प्राधमिक स्त्रोत जैसे लोकप्रचलित श्रुति परंपरा तथा द्वितीयक स्त्रोत, जैसे–लोक साहित्य पर उपलब्ध कृतियों एवं अन्तर्जाल के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया है।

छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य का परिचय –

साधारण जनता से संबंधित साहित्य को ही लोकसाहित्य कहा जाता है। "लोक साहित्य का अंभिप्राय उस साहित्य से है, जिसकी रचना लोक करता है। लोकसाहित्य उतना ही प्राचीन है, जितना की मानव। इसलिए उसमें जनजीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक समय और प्रकृति सब कुछ समाहित है।" (2) इन्टरनेट गूगल में लोकसाहित्य की परिभाषा इस प्रकार दी गई – "लोकसाहित्य लोकसंस्कृति से जन्म लेता है और इसे एक राष्ट्र की जीवनी माना जाता है। इसका आधार जनजीवन की वास्तविकताएं होती और सामान्य सांस्कृतिक जीवन, उनके कार्य और परिश्रम के तरीके, किसी राष्ट्र के वैचारिक परिवर्तन, उसके के व्यवहार, प्रकृति, धर्म एवं आस्था आदि इन्हीं लोक साहित्य में प्रतिबिंबित होते हैं।"

लोक साहित्य आंदिकाल से श्रुति एवं स्मृत्ति के सहारे ही अग्रेषित हैं इस साहित्य में मुख्य रूप से वे ही स्वीकार की जाती है अथवा जीवन पाती है।. जो अनेक कष्ठों से अनेक रूपों में बन बिगड़ कर एक सर्वमान्य रूप धारण कर लेती है। यह रचना क्रम आदिकाल से अब तकें जारी है। परंपरागत एवं सामूहिक प्रतिभाओं से निर्मित होने के कारण विद्वानों ने लोकसाहित्य को 'अपौरूषेय' की सज्ञा दीं है।

ऊपर कहा ही जा चुका है कि लोक साहित्य एक मौखिक या वाचिक परंपरा है। यदि लेखबद्धता का गौरव लोक साहित्य को मिल जाय तो वह एक प्रकार से निष्प्रमाण हो जाएगा। फ्रंक

सिजविक कहते हैं– "लोक साहित्य का लिपिवद्ध होना ही उसकी मृत्यु है।" वस्तुतः लोक साहित्य की मौखिकता ने ही उसे व्यापकत्ता एवं अनेकरूपता प्रदान की है।

छत्तीसगढ़ लोकसाहित्य –

लोकसाहित्य की संपूर्ण विशेषता छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में है। छत्तीसगढ़ प्रदेश के जनजीवन के निर्माण में इसमें लोकसीहित्य का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। छत्तीसगढ़ की जनता के वर्तमान जोवन के विविध पक्षों को समझने के लिए भी यह लोकसाहित्य बहुत उपयोगी एवं प्रांसगिक है। इस अंचल में बिखरा हुआ अपार लोक साहित्य आज भी यहाँ से जीवनी शक्ति ले रहा है और अपने प्रभाव का बिम्ब फेंक भी रहा है।

चूँकि छत्तीसगढ़ प्रदेश आदिवासी बहुलक अंचल हैं इसलिए यहाँ के लोक साहित्य प्रदेश आदिवासी कला एवं संस्कृति की व्यापक झलक मिलती है, क्योंकि छत्तीसगढ़ लोक साहित्य की विकास यात्रा एवं श्री वृद्धि में जनजातियों का अपना अहम योगदान है।

लोकसाहित्य में जनजातीय लोकपर्व –

लोक साहित्य लोक संस्कृति का दर्पण होता है, और लोकसंस्कृति में संपूर्ण लोक या जन के गीत, गाथा, नृत्य, उत्सव, त्यौषार एवं पर्व समाहित होते है। इस दृष्टि से लोक साहित्य में इन्हीं सब विधाओं की अभिव्यक्ति है। छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में जनजातीय पर्वों, उत्सवों एवं त्योहारों ने पूरी अभिव्यक्ति पाई है। जिसका वर्णन नीचे किया गया है।

जनजातियों का पूरा नैसर्गिक जीवन पर्वोन्मुखी है। इनके जीवन का बहुत बड़ों है। छत्तीसगढ़ प्रदेश में अवस्थित 42 जनजातियों के भी अनेक उत्सव एवं पर्व हैं जिसमें वे गाते है, नृत्य करते हैं और कई धार्मिक अनुष्ठान करते हैं जिनका यहाँ के लोक साहित्य में अपना प्रमुख स्थान हैं।

छत्तीसगढ़ के जनजातियों के प्रमुख पर्व –

इसके अंतर्गत जनजातियों के उन त्योहारों, उत्सवों को शामिल किया जाता है, जिसमें नृत्य, गान आदि कर अपने मन के उद्दाम भावों को व्यक्त करते हैं ।

(1) दशहरा – यह बस्तर के जनजातियों का सबसे बड़ा पर्व है। "यह परंपरगत पर्व विधि विधानों के मध्य अनेक चरणों–काछन, शादि, फूल रथचालन मालवी परघाव, भीतरी रैनी, रथ चोरी, गोंचा, काछिन, जात्रा, मुरिया दरबार, कुटुम जात्रा, ओड़ाही पर्व आदि में संपादित है।" 2 यचह पूरे 3 दिन चलता है। इस ऐतिहासिक दशहरा को देखने न केवल देश के वरन विदेशी भी पहूँचते हैं।

(2) मेघनाद – फाल्गुन मास में गोंड़ आदिवासियों द्वारा यह पर्व मनाया जाता है" रावण पुत्र मेघनांद को गोड़ अपने सर्वोच्च देवता मानकर बड़ी धूम–धाम से पूजा करते हैं। ये आदिवासी मेघनाद के प्रतीक के रूप में मेघनांद खम्भ (पॉच खम्बों की श्रृंखला) बनाते है। पाँचवे खम्बे में बल्ली बॉधकर तथा उस पर लटक कर चारों दिशाओं में प्रसन्न होकर घूमते हैं और अपने गेघनाद के सवार होने का अनुभव करते हैं।

(3) लारूकाज – यह छत्तीसगढ़ की गोड़ जनजाति का पर्व है जिसमें सूअर की बलि दी जाति है। इसे ये अपने देव नारायण के सम्मान में मनाते हैं।

(4) ककसार – यह अबुझमाड़िया आदिवासियों (विशेषकर गुड़िया जनजाति) का. एक नृत्य प्रधान मुख्य पर्व हैं "मुड़िया गाँव के धार्मिक स्थल पर वर्ष में एक बार ककसार का आयोजन किया जाता है, जिसमें .ये लोग 'लिंगा देव' को प्रसन्न करने के लिए रात भर नृत्य गायन करते हैं। पुरूष कमर में घाँटी बाँधते हैं और स्त्रियाँ विभिन्न फूलों और मोत्तियों की माला पहनती है ।"3 इसी दौरान अविवाहित युवक–युवती अपने जीवन साथी का भी चुनाव कर सकते हैं।

(5) धुरवा – बस्तर की द्यधुरवा जनजाति द्वारा धुरवा पर्वोत्सव गनाया जाता है। यह पर्व चैत्र माह की प्रत्तिपदा से शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा तक मनाया जाता है। इस पर्व में धुरवा अपनी आध्यात्मिक शक्तियों का प्रदर्शन भी करते है। इस पर्व में अन्य जनजातियों की भाँति धुरवा भी नृत्य गान कर अपने मन कीय समंगों को प्रकट करते हैं।

(6) बीज बोहानी – ये कोरवा जनजाति द्वारा गनाया जाने वाला पर्व है। इसमें ये जून माह में खेतों में बीज बोने के पूर्व अपनी अच्छी फसल की कामना लेकर अपने इष्ट देव को प्रसन्न करने के लिए यह उत्सव बड़ी घूम–धाम से मनाया जाता है। इसमें बच्चे–बूढे सब उत्साह से भाग लेते हैं एवं खूब नृत्य एवं गान करते है।

(7) कोरा – यह छत्तीसगढ़ के कोरवा जनजाति का पर्व है, कोरवा लोग इस पर्व को, सितंबर माह में कुटकी एवं गॉदली (प्याज) की फसल काटने के बाद बडे धूम–धाम से इस उत्सव को मनाते हैं। इसे कोरवाओं का 'छेरछेरा' भी कर सकते हैं।

(8) धेरसा – इस पर्व को भी कोरवा जनजातियों का 'कोरा' पर्व के समान ही फसल काटने के उपरान्त मनाया जाता है। अन्तर सिर्फ इतना है कि इसे जनवरी में उत्तरा (सरसों, दाल आदि) की, फसल उत्साह पूर्वक मनाया जाता है।

(9) नवाखानी – छत्तीसगढ़ के गोंड़ जनजाति द्वारा यह पर्व नयी फसल से अनाज प्राप्ति" के उपलेक्ष्य में भादों के दूसरे पक्ष में मनाया जाता है, इसमें ये आदिवासी अपने पूर्वजों को नया अनाज एवं मदिरा चढ़ाते हैं। यह गोंड़ों का अन्नकूंट त्योहार है।

(10) चौत्रई पर्व – छत्तीसगढ़ के परजा एवं धुरवा जनजातियों द्वारा यह पर्व बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इसमें आने देव को सुअर या मूर्गे की बलि दी जाती है व सामूहिक भोज का आयोजन होता है।

(11) दियारी (दीवाली) – "बस्तर में जनजाति अपने तरीके से दीपावलो का त्यौहार मनाते है। यह दीपावली के दूसरे दिन सुबह बैलों को खिचड़ी खिलाकर मनाया जाता है।"4 यह त्यौहार हिन्दुओं के अन्नकूट जैसा ही है।

(12) माटी तिहार – इंस त्यौहार को बस्तर क्षेत्र में दीपावली के पश्चात् मनाया जांताश है, जिसमें माटी (पृथ्वी) की पूजा कर उसके प्रति अपना प्रेम और सद्भावना व्यक्त किया जाता है तथा हमेशा उपजाऊ बने रह कर उनकी रक्षा करने की प्रार्थना की जाती है।

(13) आमा खाई – यह पर्व भी बस्तर के धुरवा एवं परजा जनजातियों द्वारा. आम में फल आने के समय मनाया जाता है। यह इन आदिवासियों का बसन्तोत्सव है।

(14) करमा – यह पर्व एवं नृत्य दोनो है। इसे वर्षा ऋतु में हरियाली आने की बैगा, सराँव व बिंडावार जनजात्तियों द्वारा मनाया जाता है, "जब धान का पौधा रोपने के लिए तैयार हो जाता है तब यह उत्सव(अच्छी फसल की कामना लेकर) मनाया जाता है और करमा नृत्य किया जाता है ।"5

(15) सरहुल – यह मुण्डा एवं उराँव जनजाति का पर्व एवं नृत्य दोनों हैं। इस अवसर पर प्रतीमात्मक रूप से सूर्यदेव और धरती गीत्ता का विवाह रचाया जाता है व मुर्गे की बलि दी जाती है। अप्रैल के आरंभ में साल वृक्ष में फूल आने भर यह पव मनाया जाता है। "उराँव जनजाति के लोग प्रतिवर्ष चौत्र मास की पूर्णिमा पर साल वृक्ष की पूजा करते हैं और इसके आस–पास नृत्य करते हैं। इस सामूहिक नृत्य में युवक–युवती दोनो हिस्सा लेते हैं। वाद्ययंत्रों में प्रमुख रूप से मांदर व झाँस बनता है..... ।"5

निष्कर्ष ––

उक्त विवरणों से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में जनजातिय लोकपर्वों की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। छत्तीसगढ़ में जनजातीय लोकसाहित्य की भी समृद्ध परंपरा है, जिसमें उनके गीतें, नृत्य, कला, शिल्प, उत्सव या पर्व आदि सम्मिलित हैं। अपने भावों में मगन हीकर नृत्यं करते एवं "गाते आदिवासियों को उनके विविध लोकपर्वों के अवसर पर उनको प्राकृतिक रूपों में सहन देखा जा सकता है। दुनिया को चमक–दमक। एवं कुत्रिमता से दूर छत्तीसगढ़ के जनजातियों की कला, संस्कृंति शिल्प एवं पर्व छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में अपना विशिष्ट पहचान बनाए हुए गतिमान है।

संदर्भ सूची –

1. लोक साहित्य विज्ञान – सत्येंद्र पृ. 03
2. छत्तीसगढ़ वृहद संदर्भ – संजय एवं चंदन त्रिपाठी पृ. 487
3. छत्तीसगढ़ वृहद संदर्भ – संजय एवं चंदन त्रिपाठी पृ. 463
4. छत्तीसगढ़ वृहद संदर्भ – संजय एवं चंदन त्रिपाठी पृ. 490
5. छत्तीसगढ़ वृहद संदर्भ – संजय एवं चंदन त्रिपाठो पृ. 490
6. शोध प्रकल्प (त्रैमासिक शोध पत्रिका) सेमिनार विशेषांक 2014
7. क्रांतिकुमार सिन्हा का लेख पृ. 111

भारत में राज्य राजनीति की प्रवृत्तियां एवं स्वरूप

दुर्गा खत्री
(प्रवक्ता)
राजनीति विज्ञान
राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर

भारत एक संघीय राज्य है। हमारे देश में संघात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया है। संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत को राज्यों का संघ कहा गया है। भारतीय संघ में 29 राज्य व 7 केन्द्र शासित प्रदेश है। भारतीय संविधान के अनतर्गत केन्द्र व राज्यों में दोहरी शासन व्यवस्था का प्रावधान है। संविधान द्वारा केन्द्र व राज्यों में शक्तियों का विभाजन तीन सूचियों में किया गया है। संविधान में केन्द्र व राज्यों में एक समान संस्थाओं का प्रावधान है। अर्थात केन्द्र के समान राज्यों में भी संसदात्मक व्यवस्था की स्थापना की गई है।

भारतीय संघ के राज्यों को अपनी पृथक सरकार व शासन व्यवस्था का अधिकार संविधान द्वारा दिया गया है। भारत के राज्य भारतीय राजनीति का अहम् हिस्सा है। भारतीय राज्यों में राजनीतिक संस्थायें कार्यपालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका व राजनीतिक दल केन्द्रीय राजनीति के समानांतर चलते हैं यद्यपि भारत में संघात्मक व्यवस्था के साथ एकात्मकता के भी लक्षण, विद्यमान है। अतः भारत में राज्यों की राजनीति भी उसी से प्रभावित व संचालित है। राज्यों की राजनीति प्रवृत्तियाँ भारत की केन्द्रीय राजनीति से प्रभावित है।

भारतीय राजनीति के मुख्यतः तीन स्तर है – राष्ट्रीय राजनीति, राज्य राजनीति, स्थानीय राजनीति। इनमें राष्ट्रीय राजनीति आधुनिक राजनीतिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है और स्थानीय राजनीति परंपरागत राजनीति संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन राज्य राजनीति में दोनों प्रकार की राजनीति के तत्व निहित है।

भारत की संघात्मक व्यवस्था में राज्य महत्वपूर्ण कड़िया जो स्थानीय राजनीति को राष्ट्रीय राजनीति से जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य करती है। भारतीय संघीय व्यवस्था में राज्य राजनीति का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य राजनीति राष्ट्रीय राजनीति के लिये एक महत्वपूर्ण प्रशिक्षण स्थल है। राज्यों की राजनीति भारतीय राजनीति के भविष्य का निर्माण करती है। साथ ही भारतीय संसदीय लोकतंत्रा की सफलता राज्यों की राजनीति पर निर्भर करती है।

भारत विविधताओं से भरा देश है। इन विविधताओं के कारण राज्यों के बीच विभिन्नतायें देखने को मिलती है। राज्यों की राजनीति में भाषा, जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि तत्वों का प्रभाव है। राज्य राजनीति में उत्तर भारत के राज्यों की राजनीतिक व दक्षिण भारत के राज्यों की राजनीतिक गतिविधियां एक समान नहीं हैं यद्यपि विभिन्नताओं के बावजूद भी सभी राज्यों की प्रशासनिक व्यवस्था एक समान है। एक समान शासन व्यवसथा के अधीन होते हुये भी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं अन्य तत्वों के कारण विभिन्न राज्यों में पृथक–पृथक राजनीतिक प्रवृतियों का विकास हुआ है।

1960 के दशक में राज्य राजनीति का अध्ययन शुरू हुआ। 1967 में पहली बार जब राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारें बनी तब से राज्य राजनीति अध्ययन का केन्द्र बनने लगी क्योंकि अब राज्य राजनीति केन्द्र विपरीत राजनीतिक तत्वों पर आधारित थी जो विपरीत दलों की सरकारों का प्रतिनिधित्व कर रही थी। यहीं से राज्य राजनीति में दलीय राजनीति, दलबंदी, दल बदल, आदि प्रवृतियां की शुरूआत हुई जो अब आज राज्य राजनीति की मुख्य निर्धारण प्रवृत्तियां बन चुकी है। राज्यों की राजनीति के साथ क्षेत्राीय राजनीतिक दलों का भी उद्‌भव हुआ जिसमें राज्यों की राजनीति में दल–बदल की प्रवृति को जन्म दिया और भारतीय राजनीति को भी प्रभावित किया। भारतीय राजनीति का अध्ययन राज्यों की राजनीति के बिना अधूरा है। राज्यों के चुनाव, चुनाव परिणाम व राज्यों की दलीय स्थिति राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करती हैं। राज्यों के विधान सभा संस्था चुनावों को लोकसभा चुनावों के ट्रायल के रूप में देखा जाता है। केन्द्र राज्य संबंध भी राज्यों की राजनीति को नियंत्रित व संचालित करते है। साथ ही वर्तमान में राज्यों की राजनीति में कई ऐसी प्रवृतियां देखने को मिलती है जो न तो राष्ट्रीय राजनीति के लिये सही है और न राज्यों के लिये सही है। राज्यों की राजनीति पर जातिवाद क्षेत्रीयतावाद, भाषावाद गुटबंदी दलबदल राजनीतिक अस्थिरता आदि कुप्रवतियां होवी है। यह कुप्रवृतियां संपूर्ण भारतीय राजनीति को प्रभावित कर रही है। क्योंकि हमारे देश में राष्ट्रीय राजनीति का उद्‌गम स्थल ही राज्य है। आवश्यकता इस बात की है कि केन्द्र व राज्य मिलकर एक स्वस्थ राजनीतिक वातावरण का निर्माण करें ताकि भारतीय लोकतंत्रा को सुदृढ़ व मजबूत बनाया जा सके।

TERMAL ENVIRONMENTAL POLLUTION

Dr. Vandana Kumari
Associate Professor
Govt. P.G. College
Hamirpur (U.P.)

The term 'thermal pollution' has been used to identify the detrimental effects of heated discharges . However thermal pollution does not refer to the impairment of purity by the addition of foreign, matter but denotes the impairment of the quality of environmental air or water by raising its temperature .

The discharge of hot trade effluents from industries , factories and mills and large volumes of warm 'cooling water ' from electricity generating stations may causes a temperature rise of several degrees in a river or canal . About 80 per cent of the total water withdrawn for industrial operations is used for cooling only. The water drawn is discharged substantially uncharged except for an increase in temperature. The effects of these discharges are dependent on many factors:

Temperature difference between the discharge and the receiving water ; size of the receiving stream ; quality of receiving water ; rate of heat dissipation ; downstream uses .

Among the industries that contribute to thermal loading of surface waters, nuclear power plants and thermal power stations are of prime concern. Normally , the discharged water from the steam / electric power industry has a higher temperature ranging from 6°to 10°C than the receiving w^{7}ater . To satisfy the tremendous need for electricity , the generating power of installations is raised which then needs a larger proportion of stream flow . This results in the rise of stream temperature to a level at which natural dissipation of heat will be insufficient. Hence , awareness is necessary . Sometimes negative thermal loading occurs during the generation of hydroelectric power . A part from electric power industries , various industries with cooling requirements contribute to thermal loading . It is reported that about 18 percent heat is given to cooling waters in nuclear power plants than to fossil fuel plants of equivalent size.

Another contributor to thermal pollution is municipal sewage. Domestic sewage is usually discharged into rivers, streams or canals with or without treatment. The sewage normally has a higher temperature than the receiving water . When sewage is discharged in to water , not only does the stream temperature rises to a measurable extent but also there are some other effects . the organic matter present in the sewage and other oxidisable matter utilize the dissolved oxygen present in the surface water for oxidation. When the temperatue of the receiving water is raised , the dissolved oxygen level decreases .Demand for oxygen increase and anaerobic conditions set up , resulting in the release of foul gases . Aquatic organisms which depend on the dissolved oxygen of the surface water die. The same is the case with heated industrial effluents that contain organic matter.

Now, the question is how it effects the environment-

The life process involve many chemical reactions and the rate of these chemical reactions various according to the changes in temperature . Apart from biochemical reactions , temperature is considered vitally important to physiology and control of reproductive cycles,, digestion and reparation rates . The effects of thermal pollution are mainly on aquatic animals , particularly fish . Surface water is the habitat for a wide variety of flora and fauna.

The existence of these species depends only on the aquatic environment. The temperatue of water is considered the major feature of the environment since it affects the concentration of dissolved oxygen , pH, the rate of biochemical reactions and physical activity of aquatic animals.

Thermal pollution is a potential hazard to fish particularly .

Most species of fish can adapt themselves to a fairly wide range of water temperature , provide the fairly wide range of water temperature , provided the temperature changes occur very slowly. Sharp change, such as sudden rise or decrease in temperature is often distinctive . The temperature changes not only affect fish but the aquatic eco-system. Any disruption of the food chain, for example , may upset the entire system . If a change of temperature alters the seasonal variation in the type and abundance of lower organisms., then the fish may lack the right food at the right time. Both cold -water and warm - water species are found in the same latitude because of their adaptability to various temperature levels. The reason for this co-existence is explained as follows : there is a higher level of temperature above which both types of species can not survive. For example , brook trout lives in a temperature ranging from 4°to 35°C . Both these species survive at temperatures higher than these upper limits but for a relatively short time . With increase in temperature , fishes can not survive below a particular temperature to which they have been acclimatised.

When the temperature of the aquatic system increase , the metabolic processes taking place in the body of the fish are accelearated and its need for oxygen and rate of respiration rise . Above a particular level of temperature , death occurs due to failure of the nervous system or respiratory system or essential cell processes. In addition , spawning and other reproductive mechanisms are also affected during the spring season.

The effect of thermal loading on dissolved oxygen concentrations is a controversial subject . It is well known that oxygen is slightly soluble in water . As the temperature rises , the concentration is dissolved oxygen decreases . For example , the dissolved oxygen concentration is 14.6 pm and 0° and 7.1 pm at 35° C . It is necessary for healthy stream to have an adequate supply of dissolved oxygen since aquatic biota live aerobically . Bacteria consume organic matter as food and the utilization of organic matter is an oxidative process . The extent of oxidation of organic matter depends on the level of dissolved oxygen. Hence , in the presence of enough dissolved oxygen, bacteria multiply rapidly which in turn become the food for protozoan . These protozoans are the food for more advanced aquatic creatures. This is the food - chian that provides nourishment to the fishes . All the stages of this food - chain need dissolved oxygen. The dissolved oxygen in streams is replenished by reiteration and photosynthesis . Thus consumption of oxygen by the food -chain is compensated byh continual replenishement.

Life in an aquatic eco-system is greatly influenced by the growth of algae. Excess nutrients from wash -out water from farmlands, combined with thermal pollution cause an excessive algae growth with consequent acceleration of eutrophic and other undesirable effects . Moreover , the activities of pathogenic organisms are accelerated by higher temperatures . Thermal pollution thus makes the pathogens more violent and the fishes less resistant. As a consequence , pathogens hugeness vigorously attack fishes and a massive fish kill occurs .Such situations have long been known in the confined environment of farm and hatchery[7] ponds since the wanning up of water is easily possible due to the lesser amount of watger . As the thennal polluation load in large water courses increase, the potential for increase of fish by disease also imporoves .

In an unpolluted stream , diatoms grow best at 18° to 20°C ; green algae at 30° to 35°C ; and blue green algae at 35° to 40°C . Thus , thermal discharge to a water course may favour the growth of blue - green algae over green algae, resulting in a damage to the eco-system . Blue green algae constitute poorer food sources and sometimes become toxic for fishes.

Apart from all these, changes in both the physical and chemical properties of water occur due to a rise in temperature . As the temperature increases, the vapour pressure increases sharply while viscosity of the water decreases. The solubility of gases in water decreases with increasing temperature. These properties have important effects on aquatic life . The sediment load of a stream tends to settle more rapidly, possibly affecting aquatic food supplies . The relationship between solubility of oxygen and fish life has already been discussed . Since higher temperatures increase the rates of physiological processes and fovour bacterial growth , the oxidation of oxygen in speeded up due to the increased rate of oxygen depletion, Thus the dissolved oxygen problem is aggravated further .

Municipal effluents consisting primarily of sewage are discharged into nearby water courses . This type of disposal method is acceptable as the degree of treatment confonns with the volume of diluting water and with the forces of natural purification which include physical , chemical and biological reactions . Purification is an aerobic oxidation process and complex organic matter is converted into innocuous substances by bacteria . It is estimated that rate of biological activity doubles with each 10° C rise in temperature . This rapid activity places a corresponding burden on the dissolved oxygen resources of the water * When the water contains a higher amount of dissolved oxygen , a rise in temperature is desirable because purification occurs more rapidly . But, when the water course contains a higher amount of dissolved oxygen , a rise in temperature is desirable because purification occurs more rapidly. But, when the water course contains little oxygen or if the waste to be disposed has a higher demand than the supply then noxious conditions develop. However , a rise in temperature generally stimulates the proliferation of photosynthetic organisms, particularly the phytoplankton, which compensates for the deficit of dissolved oxygen. Thus , warm watger sometimes is beneficial though detrimental in other cases. It has also to be mentioned that colder the w[7]ater (entering a purification plant) the higher will be treatment cost, Moreover, warm water is best suited for laundered purposes, but they tend to promote the growth of algae and produce tastes and odour in the receiving water .

Though the effects of thermal pollution are not so severe, its control is necessary since in future the effects may be worse. The use of water from a water course for cooling purpose with subsequent return to the water way after passage through the condenser is termed as ‘once-through cooling’ . To reduce the magnitude of pollution, the outlet water can be made to give up some of its heat to the atmosphere and then may be discharged in to the water course. To make it effective , cooling towers are employed in many power stations and artificial lakes or cooling ponds are situated in some of the places .

Cooling Towers

Cooling towers transfers some of the heat from cooling water the atmosphere, most probably through the evaporation of water Evaporative cooling towers are either natural draft towers or mechanical draft towers.

Natural draft towers : In these cooling towers, hot water is sprayed through a rising current of air . The water vapour gives its heat to the counter -current air and get cooled . The cooled wate is collected at the bottom and returned to the water body . Its instatillation and operation costs are high.

Mechanical draft cooling towers : In the cooling towers , air flow is forced or induced by fans. How water during its passage to the water course, gets cooled by the action of air. However , these are not preferred since an irritating noise is produced due to the operation of fans; operation costs are also more.

Evaporative cooling towers cool the water by 10°C or more, but evaporate 2 percent or more of water during the process. One of their demerits is that they form fog under certain atmospheric and temperature conditions.

Just as there is the evaporative cooling tower, there is also the non- evaporative cooling tower, in which heat is transferred directly to the air by means of heat exchangers. However, the cost involved is much higher .

Artificial Lakes or cooling ponds

These are the man made bodies of water which offer one possible alternative to once through cooling. The heated effluents can be discharged in to the lake at one end and the water for cooling purposes may be drawn at the other. Sinche the heat would eventually be dissipated through evaporation . the cooling pond has to be replenished continusoly .

As our future generations will need more and more electricity .Pollution problems will continue to grow at a sharp rate because of the subsequent increase in electric power production . In future , the problem of thermal pollution can be alleviated by improving the efficiency of the electric power generating plant.

References

1. Environmental pollution and Health Hazards in India - R. Kumar
2. Environmental Studies - Dr. D.K. Thakur
3. Ecology and pollution of Indian Revier - R.K. Trivedy
4. Environmental Education - Dr. D.K. Thakur
5. Environemtal problems, Rules and Acts - Dr. D.K. Thakur
6. Environmental Awarenes in Vedas - Nandita Singhavi
7. Environmetal Law - Dharmendra S. Sengar
8. Ozone Depletion - Jyoti Dubey
9. We and our Environmental - Rachna Garg

समकालीन कविता में सामाजिक राजनैतिक चेतना के विकास में प्रतिनिधि रचनाकार का योगदान

डॉ. गणेश लाल निनामा
व्याख्याता हिन्दी
एस.बी.पी. राजकीय महाविद्यालय
डूंगरपुर, (राज.)

हिन्दी कविता आज जिस भाव–भूमि पर खड़ी है, वहां वह अपनी सौन्दर्यचेतना एवं यथार्थ बोध के साथ ही समाज एवं मानवीय मूल्यों के प्रति अधिक जागृत दिखाई देती है। जिसमें सामाजिक एवं राजनैतिक गतिविधियों का वास्तविक प्रतिबिंब झलकता है। यह आम आदमी की चिंता, पीड़ा, सुख–दुःख, आशा–निराशा तथा संवेदना आदि सच्चाईयों का आइना है। डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय समकालीन कविता के बारे में लिखते हैं– 'समकालीन हिन्दी कविता में जो हो रहा है, उसमें जीते, संघर्ष करते, लड़ते, तड़पते, गरजते तथा ठोकर खाकर सोचते वास्तविक आदमी का परिदृश्य है। आज की कविता में काल अपने गत्यात्मक रूप में है। ठहरे हुए क्षणका 'क्षणांश' के रूप में नहीं यह कालक्षण की कविता नहीं, काल–प्रवाह आघात और विस्फोट की कविता है।[1]

हिन्दी कविता में 'समकालीन' शब्द का प्रयोग बीसवीं शती के सातवें दशक में प्रारम्भ हुआ। 'समकालीन' शब्द जहाँ एक समय में घटित होने के अस्तित्व का बोध कराता है, वहीं उससे यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह समसामयिक यथार्थ को, समकालीन चेतना को भी स्वर प्रदान करे। साहित्य के क्षेत्र में एक साथ, एक समय में जीने और लिखने वालों को 'समकालीन' कहा जाता है। 'समकालीन' शब्द के संदर्भ में प्रो. सुवास कुमार का मत है कि "जो समकालीन होता है, उसके लिए तात्कालिक समय और समाज को समझना तथा उनकी माँग को पूरा करना बहुत जरूरी होता है। जो सही अर्थें में समकालीन है, वह अपने सामाजिक जीवन–यथार्थ को अच्छी तरह समझता है और उसे वाणी देता है।"[2]

समकालीन कविता की व्युत्पत्ति एवं विकास पर तत्कालीन 'पहल' पत्रिका के संपादक ने कहा था कि "आज की कविता में अलग से कोई आन्दोलन नहीं है, बल्कि वह देश में विभिन्न स्तरों पर जारी शोषण, अत्याचार बर्बरता और जनसाधारण के विरूद्ध किए जा रहे षडयंत्रों के प्रतिरोध में जारी एक व्यापक आन्दोलन का हिस्सा है। सबसे पीड़ित आदमी से कविता का रिश्ता बनाने की इन कोशिशों ने कविता के प्रति पाठक और कवि दोनों के दृष्टिकोण को और उससे भी अधिक कवि–कर्म की परिभाषा को समूचा बदल दिया है। आज एक ऐसी कविता की रचना हो रही है, जिसमें व्यक्तिगत और सामाजिक, स्थानीय और सार्वभौमिक, राजनैतिक और अराजनैतिक जैसे अलगावन होकर उनकी वास्तविक द्वंद्वात्मकता प्रकट हो रही है। मामूली लगने वाले मानवीय अनुभवों और व्यवहारों के माध्यम से उस व्यापक यथार्थ की अभिव्यक्ति हो रही है, जिसमें सामान्य मनुष्य अपनी छटपटाहट के साथ अगली लड़ाई के लिए तैयार हो रहा है। समकालीन कविता की एक उल्लेखनीय शक्ति यह कि उसमें छोटे और साधारण लगने वाले अनुभव बड़े और स्तर–बहुल अनुभवों से जुड़े हैं और उनमें व्यक्तिगत पीड़ाओं के माध्यम से राजनैतिक यातनाएँ सामने आई हैं।" इस कविता में हमेशा मानव मूल्यों से जुड़े संदर्भों का चित्रण करने की ललक मौजूद रही है। साथ ही काव्य–सृजन में परिवेश, वातावरण और परिस्थिति का योगदान भी महत्वपूर्ण रहता है।

समकालीन समाज एवं राजनीति की जितनी मुखर एवं साकार अभिव्यक्ति समकालीन कविता में हुई है, उतनी किसी और विधा में नहीं। समकालीन कवि का ध्यान सबसे पहले और अंत में समाज के उन लोगों पर है, जो व्यवस्था के कारण जिन्दगी ठीक से जी नहीं पा रहे हैं। रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, लक्ष्मीकान्त वर्मा, धूमिल, लीलाधर जंगूड़ी, चन्द्रकान्त देवताले, मंगलेश डबरावल, उदय प्रकाश और राजेश जोशी आदि कवि आम आदमी से जड़कर कविता कर रहे हैं।

समकालीन कविता ने सामाजिक यथार्थ के प्रस्तुतीकरण के साथ सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना जागृत करने में भी सफलता प्राप्त की है। समकालीन सामाजिक एवं राजनैतिक कुरीतियों,

विषमताओं, विद्रूपताओं एवं विसंगतियों को सभी कवियों ने मुखर स्वर दिया है। रघुवीर सहाय के 'सीढ़ियों पर धूप' काव्य संग्रह की एक कविता में यह स्वर अभिव्यक्त हुआ हैः–

"क्या होगा इस कभी–कभी के मधुर मिलन की घड़ियों का,
जीवन की टूटी–टूटी इन छोटी–छोटी कड़ियों का,
कैसे इनकी विश्रृंखलता मुझको–तुझको जोड़ेगी,
क्या कल नाता वही जुड़ेगा आज जहां यह तोड़ेगी।"

समकालीन सामाजिक–राजनैतिक चेतना का प्रखर रूप श्रीकान्त वर्मा के 'मगध' काव्य में देख सकते हैं। केदारनाथ सिह की 'चुनाव की पूर्व संध्या पर' कविता एवं 'घोषणा' नामक काव्य में आज की शासन व्यवस्था पर करारा प्रहार किया हैः–

"मैं घोषित करता हूँ
कि जो सच है
वह सच नहीं है, जो जानता है,
उस तक खबर अभी पहुँची ही नहीं,
जो हुक्म देता है, वह डरा हुआ है,
जो फैसला देता है, उसे पता नहीं, वह गिरफ्तार है।"

लीलाधर 'जगूड़ी' भी अपनी कविताओं में समसामयिक त्रासदियों और अनिश्चितताओं को अभिव्यक्त करते हैं। कुछ पंक्तिया :–

"दो साल पहले मेरे पास तौलिया नहीं था,
और कहीं का एक तुम्हारे जैसा आदमी,
फुसफुसा नहीं पाया था, उसने सिर्फ हाथ से कहा था,
मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाऊँगा, फिर भी दबे हुए गले के नीचे,
चाकू धँसाकर, उस दिन, मैंने पाँच रुपया कमाया था,
मरने के बाद आदमी को रूपयों की दरकार नहीं रहती,
आदमी को मारते हुए हर बार, मेरी ज़रूरत,
मुझसे यही कहती।"

एक तरफ़ जिन्दगी की त्रासदी और दूसरी तरफ़ गरीबी का परिणाम क्या है? इसका चित्रण कवि का लक्ष्य है। हत्या भी ग़रीबी और भूख के सामने कोई 'पाप' नहीं रह जाती। किसी भी हालत में आदमी भूख मिटाने के लिए विवश हो जाता है। जिन्दगी में जो भी सुविधाएँ नही हैं उन्हें पाने की लालच भरी सोच उसे हिंसा के लिए प्रेरित करती है। यह विडंबना नहीं, समकालीन समाज की सच्चाई है। जगूड़ी की कविताएं ऐसी विडंबनाओं, कुरीतियों, अनीतियों एवं दुराचारों को मुखर स्वर में प्रस्तुत करती हैं। 1972 में प्रकाशित 'नाटक जारी है' नामक संग्रह उनकी इस पहचान को व्यक्त करता है। साथ ही लोकतन्त्रीय नाटक को भी व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। राजनीति में सबसे अधिक असंगतियाँ हैं, इसलिए यह समकालीन कविता का मुख्य विषय बनी। कवि हड़ताल एवं प्रजातंत्र की विफलता तथा नेताओं की मौका परस्ती पर टूट पड़ता है–

"बहुत कुछ करना है अपने स्वागत में,
सांकेतिक हड़ताल को दिन में पहचानना है,
घने अन्धेरे में गन्दे नल के बीच अपना लोकतन्त्र पछीटना है,
कुल मिलाकर मुझे जनता से आना है और मेले से जाना है।"

समकालीन कविता अपने युग, परिवेश और जनता से इस तरह जुड़ी है कि उसके बीच पार्थक्य करना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन मालूम पड़ता है। इसी कारण से उस युग की नई पीढ़ी को दिशा और दृष्टि प्रदान करने में भी, इसकी भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता। समकालीन व्यवस्था के विरूद्ध गूँज उठने वाला स्वर, काव्य–सृजन का एक नया आयाम है। सत्ता के विरोध में आवाज उठाने वाले कवियों में सबसे आगे 'धूमिल' हैं। 'भाषा की रात', 'जनतन्त्र के सूर्योदय में', 'अकाल दर्शन',

'प्रजातन्त्र के विरूद्ध', पटकथा आदि अपनी कविताओं में भारतीय जनत़ की बुराईयों एवं अनीतियों से आच्छातिद मुखौटा खोलने की कोशिश उन्होंने की है। धूमिल कहते हैं–

"जबकि मैं जानता हूँ कि 'इनकार में भरी हुई एक चीख',
और 'एक समझदार चुप' दोनों का मतलब एक है,
भविष्य गढ़ने में 'चुप' और 'चीख' अपनी–अपनी जगह,
एक ही किस्म से,
अपना–अपना फ़र्ज अदा करते हैं।"

धूमिल निरन्तर 'दूसरे प्रजातन्त्र की तलाश' में जुटे रहे। मुझे अपनी कविताओं के लिए दूसरे प्रजातन्त्र की तलाश है, जहाँ कोई बच्चा भूखा रहकर स्कूल नहीं जाएगा, यह गणतन्त्र कैसा है? दर असल, अपने यहाँ जनतन्त्र एक ऐसा तमाशा है, जिसकी जान मदारी की भाषा है।

समकालीन कवि– आलोचक विजय कुमार धूमिल के बारे में कहते हैंः– धूमिल की कविता आजादी के बाद वयस्क हुए एक ऐसे नौजवान के गुस्से और खीझ से भरी कविता है जिसने अपने देश और समाज में हर जगह, हर स्तर पर विसंगति, भ्रष्टाचार, ढोंग, पाखण्ड, आपाधापी और बंदरबांट का साक्षात्कार किया है।[3] समाज की अनीतियों के खिलाफ प्रश्न खड़ा करना उनकी लेखनी का उद्देश्य था। समाज एवं राजनीति की विसंगति को उजागर करती ये पंक्तियां :–

"एक आदमी, रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है,
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है,
वह सिर्फ रोटी से खेलता है, मैं पूछता हूँ
यह तीसरा आदमी कौन है? मेरे देश की संसद मौन है।"

समकालीन सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति में हो रहा बदलाव, जनता में संघर्ष और विद्रोह की चेतना जगाता है। समकालीन कविता इन सभी तथ्यों को बड़ी प्रामाणिकता और संवेदनशीलता से उजागर करती है उसमें बदलाव की चेतना हमेशा से विद्यमान रही है।

संदर्भ संकेत –

1. संचारिका (त्रैमासिक) सम्पादक, माधव सोनटक्के, जुलाई–सितम्बर, 2007, पृ.सं. 11
2. समकालीन, भारतीय साहित्य (द्विमासिक) पत्रिका जनवरी–फरवरी, 2010, पृ.सं. 143
3. समकालीन, भारतीय साहित्य (द्विमासिक) पत्रिका जनवरी–फरवरी, 2010, पृ.सं. 136

कबीर का दर्शन

– **डॉ. कृष्णा मल्हान**
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय से.–9,
गुरुग्राम

काल की कठोर आवश्यकताएं संतों एवं महापुरुषों को जन्म देती हैं। भारत में परमात्मा व ब्रह्म के बाद सन्तों की महिमा सबसे अधिक गाई गई है, क्योंकि वे ब्रह्म को जानने पहचानने वाले तथा जीवन व जगत के रहस्यों का भेदन करके सत्य का अनुभव करने वाले होते हैं। ये अध्यात्म पथ के पथिक होते हैं और अनुभूत सत्य का आख्यान करते हैं। अध्यात्म पथ का साधन है– धर्म, किन्तु ये धर्म को मूलतः समाज से न जोड़कर व्यक्ति से जोड़ते हैं, तथा सदाचारी और चरित्रवान को श्रेष्ठ धार्मिक मानते हैं। जाति पांति तथा वर्ण व्यवस्था में इनका कोई विश्वास नहीं। इनकी दृष्टि में तो "जाति–पांति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि को होई" व 'कथनी व करनी' में उनके यहाँ कोई अन्तर नहीं होता। जय माला, छापा, तिलक, आदि बाह्याडम्बरों का ये खुलकर विरोध करते हैं। सन्यास के स्थान पर ये निर्लज गृहस्थ जीवन व निष्काम कर्म को पसन्द करते हैं। इस प्रकार ये एक साथ ज्ञानी भी होते हैं, भक्त भी और कर्मयोगी भी।

ऐसे ही क्रान्तिकारी सन्त को कबीर दास जी जो जाति से निम्न (जुलाहा) होते हुए भी अपने ज्ञान, भक्ति और आचरण की उच्चता के कारण सन्त कहलाए। उनके अनुसार भगवान जाति या कुल का विचार किए बिना केवल भक्ति के कारण जीवका उद्धार करता है। भगवान भक्ति से जीव उसी प्रकार पवित्र हो जाता है जैसे गंगा से मिलकर मदिरा तथा मैल और हेय ताड़पत्र भी ब्रह्मस्तुति लिखे ख्जाने पर पूज्य बन जाता है।

कबीरदास के जन्म को लेकर मतभेद हैं। कहा जाता है कि कबीर की मां विधवा ब्राह्मणी थी और उनका जन्म किसी प्रसिद्ध महात्मा के आशीर्वाद से हुआ। ब्राह्मण कन्या ने लोकलाज व लोकापवाद के भय से नवजात शिशु को लहर तालाब के किनारे डाल दिया जहाँ से नीरू नामक जुलाहा उस बालक को घर उठा लाया और अपनी पत्नी भीमा के साथ उसका पालन पोषण किया।

कबीर पंथियों के अनुसार कबीरदास का आविर्भाव लहरतारा के तालाब में कमल के पत्ते पर हुआ–

"चौदह सौ पचपन साल गए, चन्द्रवार एक ठाठ उए।
जेठ सुदी नरसायब को पूरनमासी तिथि प्रगट भए।।
धन गरजे, दामिनी दमकें बूंदे बरसें, झर लाग गए।
लहर तालाब में कमल खिले, तहं कबीर भानू प्रगट भए।।

मुसलमान जुलाहे के यहाँ पलने पर भी कबीर का झुकाव उस सयम के प्रसिद्ध सन्त स्वामी रामानन्द द्वारा प्रचालित 'राम' नाम की ओर अधिक था। बचपन में ही इस्लाम छोड़ हिन्दू धर्म में प्रेरित होते देख लोगों ने उन्हें पागल व बिगड़ा हुआ लड़का बतलाया होगा। कबीर ने शायद इसी विषय में कहा है– 'सब दुनि सयानी मैं बौए।

बड़े होने पर कबीर को शंका हुई कि 'निगुरा' रहते उकनी साधना सफल नहीं होगी इस बारे में एक किंवदंती प्रचलित है– कबीर स्वंय रामानन्द के पास दीक्षा लेने के लिए पहुँचे लेकिन स्वामी जी ने उनको मुसलमान होने के कारण शिष्य बनाने में संकोच प्रकट किया। इस पर कबीर ने एक युक्ति सोची। रामानन्द जी पंचगंगा घाट पर रहते थे और सदैव ब्रह्ममुहूर्त में गंगा स्नान करने जाया करते थे। एक दिन कबीर रास्ते की सीढ़ियों में लेट गए जिससे स्वामी जी का पांव उनके सिर से टकरा गया। इस पर रामानन्द जी के मुंह से राम–राम निकल पड़ा। कबीर ने हर्ष से उत्फुल होकर कहा कि–

'किसी तरह आपने मुझे दीक्षित कर अपने चरणें में स्थान तो दिया।' रामानन्द से कोई उत्तर न देते बना। तीी से कबीर ने अपने को रामानन्द का शिष्य प्रसिद्ध कर दिया।

कबीर के राम त्रिगुणातीत हैं। सात्विक राजस व तमस नामक तीनों गुण उसकी माया हैं। राम को वही पा सकता है जो इन तीनों से ऊपर उठकर चौथे पद की पहचान करता है–

"रजगुन, तम गुन, सतगुन कहिए, यह सभ तेरी माया।
चौथे पद को जो जन चीन्हे, तिनही परमपदु पाया।।

कबीर को पक्का विश्वास था कि दशरथ सुत का बखान करने वाला चैलोक्य 'रामनाम' के मरम से अपरिचित हैं। कबीर जिस 'साहब' के साथ लगे हुए हैं, उसकी बराबरी का और कोई है ही नहीं.... और न कोई उसके आदि–अन्त को जान ही सकता है। वह न जन्मता है, न मरता है। वह देश और काल से ऊपर है। वह कीरी से कुंजर तक सबकी सबकी खबर रखता है। वह प्रेम की पीड़ा देता भी है और उसे हरता भी है। वह चतुराई से नहीं रीझता, मन के भाव से रीझता है, लेकिन रीझता है। भवसागर के विष से भरे जल में बेचैन मन वाले कबीर को राम का समर्थ प्रेम उस पार लगा देता है। कबीर की सलाह है कि 'राम' पदारथ मिल गया उसे कसकर गांठ में बांध लो और कभी मत खोलो। उन्होंने 'राम' नाम को अपार भ्ज्ञवसागर के लिए एकमात्र नौका कहा है। कबीर ने 'राम' शब्द को टोप व 'म' को कवच की तरह धारण करके काम, क्रोध आदि चोरों से अपनी रक्षा करने का उपदेश दिया है। वे तो उस मनुष्य के पांवों की जूती तक बनने को तैयार हैं जो सपने में भी रमा का नाम लेता है–

'सपनेहु में बर्राइ के धारबेऊ निकरे नाम।
वाके पग की पैंतरी, मेरे तन को चाम।।

कबीर को पूर्ण विश्वास है कि राम का भक्त अगर हो जाता है–

'शुन्य मरै, अजपा मरै, अनहद हू मरि जाय।
राम सनेही ना मरै, कहै कबीर समुझाय।।

कबीरदास की विचारधारा पर मुस्लिम एकेश्वरवाद, वेदान्ती अद्वैतवाद, सूफियों के प्रेम तथा नाथपंथियों के हठयोग का मिलाजुला प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखता है। इन संप्रदायों व मतों से सारतत्व ग्रहण करके उन्होंने एक ऐसे सामान्य मानव धर्म की स्थापना की जो हिन्दू और मुसलामन, पंडित व मुल्ला सबको प्रेम से रहना सिखाता है तथा सबमें उस अनन्त शक्ति की छाया देखता है।

कबीरदास मूर्तिपूजा, कर्मकांड, व्रत, उपवास, छुवाछूत, रोजा, नमाज ओर तीर्थयात्रा को कोरा बाह्य आडम्बर मानते थे और उन्हें ईश्वर प्राप्ति में बाध्का समझते थे। वे तो इस शरीर में ही गुलजार खिला हुआ देखते है। वे कहते हैं– इस शरीर में ही गुलजार खिला हुआ है। बागों में भटकने की आवश्यकता नहीं है। पवित्र कर्मो की क्यारी को कर स्वच्छ एवं सरल रहन–सहन से उसकी रखवाली करो। दुर्गति रूपी काग को उड़ा कर इस गुलजार की शोभा को निहारो। संयम की बाड़ लगा कर मन रूपी माली को सावधान कर दो। इस क्यारी को क्षमा के जल से सींचते रहो। दया का पौधा सदा हरा–भरा रहेगा। चित में चेत करके आवागमन को मिटा दो।" लेकिन माया से बंधे जीवों को कबीर की यह बात समझ ही नहीं आती।

समाज की कुरीतियों का विश्लेषण, कबीर की भक्ति का एक सबल अंग है। उस समय हिन्दू व मुसलमानों में धार्मिक वैमनस्य था और उसकी जड़ अधर्मिकता थी। हिन्दू राम कहकर और तुर्क रहमान कहकर लड़ मरे, तत्व को कोई भी न समझा। इसलिए दोनों धर्मों में फैले आडम्बरों का उन्होंने कड़ा विरोध किया। 'काम दहन मन बस करन' का बीज मन्त्र उन्होंने अपेन अनुयायियों को दिया। कबीर के अनुयायियों के साधारण जनता के साथ बड़े–बड़े नवाब और सरदार भी थे, परन्तु कबीर के विरोधियों की संख्या भी कम न थी। मौलवी और पंडित दोनों उनके शत्रु बन गए। कहते हैं सिकंदर लोदी जब काशी आया तो लोगों ने कबीर के विरूद्ध उसके खूब कान भरे। पंडितों के विरोध ने कबीर को काशी

छोड़ने पर विवश कर दिया। कबीर तो 'राम' के उपासक थे। उन्होंने काशी विश्वनाथ की महिमा नहीं मानी। वे मगहर आ गए। लोगों का विश्वास था कि मगहर में मरने से मनुष्य गधे की योनि में पडता है। कबीर काशी छोड़ते समय लोगों को चुनौती दे गए–

"काशी मगहर सम विचारि।
ओछी भगति कैसे उतरे पारि।।"

कबीर एक क्रान्तिकारी युग नेता थे। वे समाज के घावों को नश्तर लगाकर उन्हें स्वच्छ करने में बड़े ही कुशल थे। उनकी वाणी सीधे मर्म पर चोट करती थी। घावों को चीर–फाड़ कर साफ करने के पश्चात वे उनका अपने ढंग से उपचार भी करते थे।

कबीर पोथी ज्ञान से वंचित रहे लेकिन उनकी मेधा के सामने पुस्तक–ज्ञान फीका पड़ गया है। कबीर पुस्तक–ज्ञान के विरुद्ध कई जगह बोले हैं–

"पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ, पण्डित भया न कोई।
ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सो पण्डित होई।।

इन शब्दों के खण्डनात्मक अभिप्राय को पकड़ने से हम कबीर के साथ न्याय नहीं कर पाएंगे। भारतीय सन्त परम्परा में शायद ही कोई ऐसा भक्त हो, जिसे हम ज्ञानी न कह सकें। हाँ, भक्ति की चरम सीमा पर पहुँच कर भक्त ज्ञान को गौण बतलाता है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि भक्त शास्त्र अध्ययन या गुरु मन्त्र के बिना ही भक्त बन गया।

"सतगुरु साँचा सूरमा, सबद जु बह्या एक।
लागत ही मे मिलि गया, पड़ा करेजे छेक।।"
"साईं मिलानी सुख दिलानी, निर्गुण सगुण भेद मिटानी।"

कबीर ने इस प्रकार निर्गुण वसुण के विवाद से भी अपने को दूर रखा।

कबीर प्रेम के उपासक रहस्यवादी कवि थे। उन्होंने आत्मा को पत्नी व परमात्मा को पति माना है। परमात्मा रूपी पति के वियोग में वे व्याकुल रहते हैं–

"साईं बिन दरद करेजो होय,
दिन नहीं चैन, रात नहीं निंदिया, काह से कहुं दुख रोय।"

"सुखिया सब संसार है, खावै और सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागै और रोवै।।

आत्मा परमात्मा की सत्ता एक हो जाने पर कबीर अपने को अमर समझ लेते हैं–

"हरि मरिहैं तो हम हूं मरिहैं
हरि न मरै, हम काहे कु मरिहैं।"

कबीर सचमुच बड़े थे। उन्होंने बुराई से भी समझौता नहीं किया। वे कभी उसके सामने नहीं झुके। दुनिया से तंग आकर उन्होंने घर–बार नहीं छोड़ा। वे गृहस्थी में रहकर ही शेर के समान सब बुराईयों का सामना करते रहे। इस प्रकार ज्ञान, भक्ति और कर्म का समन्व्य, यह ज्योति पुंज कई वर्षों तक भारत मंडल को आलोकित करके संसार से तिरोहित हो गया। लेकिन उनकी शिक्षाएं हमेशा लोगों को राह दिखाती रहेंगी।

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य – शिवकुमार मिश्र
3. कबीर– हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. आधुनिक कबीर – राजदेव सिंह
5. कबीर के दोहे : जी.एस. चौहान

बस्ती और अपराध

डॉ. हेमलता महावर
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र
महाराणा प्रताप राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

मान्य मानकों की अनुकरण हीनता का अभिप्राय नैतिक सामाजिक व कानूनी उल्लंघनों से है। दूसरे शब्दों में मान्य मानकों के उल्लंघन का अर्थ अनैतिक, समाज विरोधी और कानून विरोधी क्रिया से जोड़ा जाता है। प्राचीनकाल में कुछ जातियों और समुदायों को इन समाज विरोधी कार्य करने के लिये मान्यता प्राप्त थी। देश के कुछ हिस्सों में आज भी अपराधी जनजातियाँ पाई जाती हैं। औद्योगीकरण, सामाजिक और वैधानिक सुधारों के परिणामस्वरूप अपराधी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला है। शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण भी भीड़–भाड़ और बस्तियाँ बढ़ गई हैं। अपराध की प्रकृति भी सर्वत्र समान नहीं है, यह एक सापेक्षिक प्रघटना है।

अपराध का का अर्थ एक बाह्य व्यवहार से है जिसमें कार्य के उद्देश्य या संकल्प का समर्थन रहता है। एक पूर्णतया दुर्घटनाग्रस्त कार्य जिसमें मान्य सामाजिक मानकों का उल्लंघन होता है वह अपराध नहीं है। आत्मरक्षा के लिये किये गये कार्य को अपराध नहीं माना जा सकता। इस प्रकार एक कार्य को अपराध मानने में एक कार्य और एक अभिप्रेरक का होना महत्वपूर्ण है। चूंकि बच्चे और मानसिक रोग से ग्रस्त व्यक्ति प्रायः अपराधी कार्यो को पूर्व नियोजित करने में सक्षम नहीं है। उनको अपराधियों की कोटि में शामिल नहीं किया जा सकता। अपराध दो प्रकार के होते हैं साधारण और गंभीर अपराध। साधारण अपराध की कोटि में यातायात के नियमों का उल्लंघन साधारण चोरी और सार्वजनिक स्थानों पर विघ्न उत्पन्न करना आदि को शामिल करते हैं। गंभीर अपराध की श्रेणी में हत्या, डकैती, बलात्कार और तस्करी आदि होते हैं।

उद्देश्य– प्रस्तुत शोध–पत्र में बस्ती में गंभीर अपराध जैसी समस्यायें हैं किन्तु इन समस्याओं को हल करने के प्रयासों में मंद गति है जिसे जानने का प्रयास किया गया है साथ ही अपराध की परिस्थिति व अपराधी की मनोवृत्ति से परिचित होकर कारणों का समाधान जानने का भी प्रयत्न किया गया है।

शब्द कुंजी – अपराध, गंदी बस्ती, अपराधिक व्यवहार, मानसिक तनाव, अपराधिक कृत्य। समाजशास्त्रीय दृष्टि से अनुकरणहीनता अपराधिक व्यवहार की एक महत्वपूर्ण कसौटी है। मानक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये संस्थात्यक पद्धतियाँ हैं यदि एक व्यक्ति मानक मूल्यों और मानकों को अपने क्रियाकलापों को पूरा करने के लिये उपयोग में नहीं लेता है तो उस व्यक्ति को अपराधी या विचलित कहा जा सकता है क्योंकि उसके कार्य अप्रेक्षित व्यवहार अर्थात मानकों और मूल्यों के विपरीत होंगे। मूल्य और मानक समान नहीं है, वे हर समूह और परिस्थिति के अनुसार भिन्न पाए जाते हैं। धार्मिक मानकों का उल्लंघन कानून द्वारा दण्डनीय नहीं है, इसलिये इसे पाप माना जाता है। कुछ अपराध और पाप दोनों है जैसे परात्री गमन और आत्महत्या। कुछ कार्य ऐसे भी हैं जो कर्ता के लिए हानिकारक हैं जैसे शराबखोरी, जुआ खेलना, नशीली दवाओं का सेवन और आवारागर्दी आदि। इनकों बुरी आदत समझा जाता है किन्तु जनता में इन्हें प्रकट करना अपराध माना जाता है दुर्खीम के अनुसार अपराध का असमान दर से सामाजिक सम्बद्धता के भेदीय अंश और सदृश्य सामाजिक नियंत्रण के बारे में बोध होता है। सामाजिक सम्बद्धता के टूटने के कारण व्यक्ति जनमत और अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण के भार से स्वतंत्र हो जाता है। जनमत व अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण एकान्त समेहों में परम्परागत व्यवहार के मानकों के अनुसार अनुरूपता में सहायक होते हैं। अपराध की व्याख्या दो प्रकार से की जाती है। (1) यांत्रिक (2) एतिहासिक या अनुवांषिक। प्रथम व्याख्या का अभिप्राय अपराध के भौगोलिक जलवायु जन्म और जैवकीय कारण है। जैसे व्यक्तियों के विरूद्ध अपराध उष्ण जलवायु में और संपत्ति के विरूद्ध अपराध शीत जलवायु में अधिक पाए जाते हैं अपराध अधिक वैभव और अधिक निर्धनता दोनों के कारण होते हैं अतः अपराध एक अव्यवस्थित आर्थिक व्यवस्था की जटिलता के कारण भी होते हैं लोग

विलासिता जीवन व्यतीत करना चाहते हैं और बिना आर्थिक अपराध किए वे ऐसे आराम से नहीं रह सकते। सामाजिक और परिस्थतिक व्यवस्थाओं का भी व्यक्ति पर अपराध करने के लिये प्रभाव पड़ता है। कुछ क्षेत्रों में बाल अपराध के लिये प्रोत्साहन मिलता है। अपराधियों के ग्रामीण और शहरी गिरोह पाए जाते हैं। अपराध शास्त्र में सदरलैण्ड ने अपराध के असाम्य–साहचर्य सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। जिसका तात्पर्य है कि व्यवहार अपराध प्रतिमानों के संपर्क में आने से सीखा जाता है।

इस व्याख्या का अर्थ है कि अन्य व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया की प्रक्रिया के द्वारा अपराधी व्यवहार सीखता है। अधिगम (सीखना) में दो तत्व पाए जाते हैं। (1) अपराध करने के तरीके (2) अभिप्रेरकों प्रेरणों व्यक्तिकरण और मनोवृत्तियों का विशिष्ट निर्देशन। सहचर्य आवृत्ति अवधि प्राथमिकता और गहनता के आधार पर परिवर्तित होता रहता है अपराध एक सिद्धांत है जिसको अपराध के सुव्यवस्थित सिद्धांत के नाम से जाना जाता है। विशेष क्षेत्रों में अपराधियों के गिरोह कार्य करते हैं ऐसे गिरोहों के संगठनात्मक ढांचे होते हैं जिनमें उनके नेताओं और आचरणों के विशिष्ट मानकों पर बल दिया जाता है अपराधी व्यवहार का आधार प्रचलित साधनों और साध्यों के बीच कुसंमजन है। अपराध वास्तव में सामाजिक और कानूनी दृष्टि से अवांछनीय व्यवहार है, अतः अपराधी को दण्ड मिलता है। अपराधी कृत्यों की परिस्थितियाँ कोई भी क्यों न हो, अपराध का कोई एकाकी कारण नहीं होता है अपराध एक जटिल व्यवहार है, और इसके विविध कारक हैं।

अपराध में शारीरिक, मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक व्याख्याएँ इस बात पर बल देती हैं कि या तो अपराध विरासत में मिलता है और किसी शारीरिक एवं मानसिक कारण से होता है या बचपन के बने हुए अनुभवों का परिणाम है इसके विपरीत समाजशास्त्री यह तर्क देते हैं कि अपराधिक व्यवहार सीखा जाता है और सामाजिक पर्यावरण के परिस्थितिवष होता है समाजशास्त्रीयों ने अपराध एवं सामाजिक समस्याओं के बीच संबंध का अध्ययन करता है जिसमें एक साधारण व्यक्ति अपराध की दुनिया में प्रवेश करता है।

इस प्रकार व्याख्याओं को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पहला संरचनात्मक व्याख्याएँ दूसरा प्रक्रिया की व्याख्याएँ, अपराध की आर्थिक व्याख्या समाज में आर्थिक परिस्थितयों के द्वारा अपराधिक व्यवहारों का विश्लेषण करती है इस व्याख्या के अनुसार अपराधी आर्थिक जगत का उत्पाद है जो उसका आदर्श और लक्ष्य देता है।

अपराध एक मानसिक विकृति है जो व्यक्ति को कम समय में आर्थिक विकृति की ओर आकर्षित करती है कुछ तो अपराधी बन जाते हैं तथा कुछ को यह समाज अपराधी बना देता है अधिकतर अपराध धोखे में हो जाते हैं या आक्रोश में कर दिये जाते हैं। अपराधियों को बुरी नजर से देखने के बजाए उन पर सुधारात्मक प्रक्रिया की जानी चाहिए मनोवैज्ञानिक प्रयोग यह सिद्ध कर चुके हैं कि वातावरण (माहौल) द्वारा अपराधी की प्रवृत्ति को बदला जा सकता है। ऐसा प्रयोग तिहाड़ जेल में किरण बेदी द्वारा किया गया था, जिसके कई सकारात्मक प्रमाण सामने आया। कैदियों द्वारा बनाई गई चीजों को प्रोत्साहन दिया गया और उसका उपयोग अन्य उचित कार्यों में किया गया। इसलिये अपराधों को रोकने के लिये अपराधी से नहीं लड़ा जाये बल्कि अपराध की परिस्थिति व अपराधी की मनोवृत्ति पर विशेष ध्यान दिया जाये। सभी अपराधी और अपराधी के बीच दूरी बनायी जा सकती है।

महानगरों ने भी बस्ती के निरंतर बढ़ते बोझ ने बच्चों की मनःस्थिति को प्रभावित किया है अभिमानकों द्वारा निरंतर पढ़ाई के लिए दबाव डालना तथा अन्य चीजों जैसे खेल, टी.वी, मनोरंजन आदि में कम दिलचस्पी लेने की हिदायतें बच्चों को उग्र बना देती है जिसके कारण बच्चे कमजोर व गैर जिम्मेदार होने लगते हैं। इसी क्रम में धीर–धीरे उनके स्वभाव में अपराधिक प्रवृत्ति बढ़ती जाती है।

बस्ती की आर्थिक स्थिति दयनीय व अषोभनीय होने के कारण उनका सामाजिक स्तर अत्यंत निम्न कोटि का होता है। ये लोग झुग्गी झोपड़ियों, पुर्नवास कालोनियों, बस्तियों और गाँवों में नरकीय जीवन व्यतीत करते हैं। निरक्षरता, अशिक्षा, गरीबी और पिछड़ेपन के कारण इस वर्ग की महिलाएं स्वस्थ जीवन की समस्त सुविधाओं से वंचित रहती है इनके लिये संतुलित भोजन का अभाव सदैव रहता है जिसके कारण वे अनेक मानसिक कुंठाओं, मानसिक तनाओं और विभिन्न प्रकार के जीवन को देखा जाये तो यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उनका जीवन शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार, अन्याय और अभावों से परिपूर्ण है। बस्ती समाज का सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक पिछड़ा होता है परिवार में किसी प्रकार का

संकट, परेशानी और दिक्कत आने पर अंत में समस्या का समाधान अत्याचार (मारपीट) करके किया जाता है।

अपराध एक सामाजिक क्रिया है। तथा कुछ को यह समाज अपराधी बना देता है। मनोवैज्ञानिक भी कहते हैं किसी चीज का मोह व उनको पाने के लिये धैर्य को खो देना ही अपराध का सबसे बड़ा कारण होता है। गंदी बस्तियों की आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण उनका सामाजिक स्तर अत्यंत निम्न कोटि का होता है। अनेक मानसिक कुंठाओं, मानसिक तनावों और विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगों से ग्रसित हो जाते हैं और अपराध के लिये प्रेरित होते हैं। बस्तियों में ही अपराध सर्वाधिक हैं नियंत्रण के बावजूद भी अपराधों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है। पूर्व अध्ययन की मान्यता गंदी बस्ती अपराधों की जन्म स्थली है सिद्ध होती है। अपराधों को नियंत्रित करने के लिये पुलिस का आगमन भी नियमित होता है फिर भी बढ़ोत्तरी होती जाती है।

हम कह सकते हैं कि भारत में गंदी बस्तियों की गंभीर समस्या है और यह आधुनिक समाज के लिये चुनौती है। इन समस्याओं को हल करने के लिये केन्द्र सरकार, नगर पालिकाओं एवं बीमा विभाग द्वारा अनेक प्रयास किये गए हैं सरकार गंदी बस्तियों के उत्थान के लिये विभिन्न योजनाओं द्वारा प्रयास कर रही है। बस्ती के सुधारात्मक कार्यो के लिये सरकार को श्रेय दिया गया है 3 दिसम्बर 2005 को समेकित आवास एवं सलम विकास के कार्यक्रम भी षुरू किए गए। इस कार्यक्रम में बाल्मीकि अम्बेडकर आवास योजना और राष्ट्रीय स्लम विकास स्कीम को मिला दिया गया है। सलम विकास योजना का मुख्य उद्देश्य बस्तियों के समग्र विकास के साथ–साथ पर्याप्त आश्रय और पहचान किए गए बस्तियों में रहने वाले लोगों के लिए बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराकर उन्हें स्वस्थ्य और बेहतर शहरी पर्यावरण उपलब्ध कराना है।

अपराधों की बढ़ती हुई समस्या को देखते हुए यह अत्यधिक आवश्यक हो गया है कि ऐसे अपराधों को रोकने के लिये योजनाबद्ध रूप से प्रयत्न किये जाए इन सुझावों के द्वारा अपराधों को बहुत बड़ी सीमा तक कम किया जा सकता है। अपराधी के लिये कठोर दण्ड देने की व्यवस्था तभी संभव है जब कानून में आवश्यकतानुसार संशोधन किया जाए। हमारे देष के कानून और न्यायिक व्यवस्था चाहे कितनी भी सक्षम हो लेकिन जनसहयोग के बिना अपराधों को कम नहीं किया जा सकता प्रथा सभी समस्याओं का निराकरण एक नियोजित आधार पर एक लम्बी अवधि में ही संभव हो सकता है।

संदर्भ सूची–

1. देसाई, ए.आर व पिल्लई एस.डी–– सलम्स और आर्गेनाईजेशन मुम्बई पापुलर प्रकाशन, 1970
2. डिसूजा, विक्टर एस– "स्लम्स एंड सोशल स्ट्रेक्चर अरबन एंड रूलर प्लालिंग थाट वा 8 जनवरी–जून, 1970
3. दास, बोइचीबाला– हरिजन एलम्स ऑफ सम्बलपुर, सोशल वेलफेयर 27 (1–2 अप्रेल) दिल्ली, 1980
4. टालकर परासन्स – सोशल स्ट्रक्चर, 1980
5. परांजपे एच.के– ग्रोथ ऑफ एलम्स, 1985
6. आहूजा, राय– सामाजिक समस्याएँ, रावत पब्लिकेशन जयपुर, 2000

Oxidation of Thiourea by Pyridinium Chlorochromate in Aqueous DMF Medium: A Kinetic and Mechanistic Study

Munna Lal Meena
Department of Chemistry,
Govt. P. G. College Pratapgarh, 312605, Rajasthan, India.

ABSTRACT

Oxidation of Thiourea by pyridinium chlorochromate in aqueous DMF medium, containing perchloric acid has been studied at 27ºC. The rate of reaction was found to be of first order dependence on [PCC], [Thiourea] and [H^+]. The increase in the rate of oxidation with increase in acidity indicates the involvement of a protonated chromium(VI) species in the rate-determining step. the rate of reaction increased with increase in dielectric constant of the reaction medium., which indicates that there is involvement of an ion–dipole type of interaction in the rate-determining step. The activation parameters have been evaluated. On the basis of the experimental findings, a suitable mechanism and rate law has been proposed.

***Keywords*:** kinetics, oxidation, DMF (N, N-dimethylformamide), Thiourea, PCC (pyridinium chlorochromate).

INTRODUCTION

Pyridinium chlorochromate being one of the most versatile available oxidizing agent[1]**.** A number of reports on the oxidation of several substrates by pyridinium chlorochromate (PCC) are available in the literature like methionine[2], oximes[3], unsaturated acids[4],cysteine[5], alcohols[6]. There seems to be no report on the oxidation of Tyrosine by pyridinium chlorochromate.

Thiourea is an organosulfur compound with the formula $SC(NH_2)_2$ (also called Thiocarbamide or Sulfourea). It is structurally similar to urea, except that the oxygen atom is replaced by a sulfur atom, but the properties of urea and thiourea differ significantly. Thiourea is a reagent in organic synthesis. "Thioureas" refers to a broad class of compounds with the general structure $(R^1R^2N)(R^3R^4N)C=S$. Thioureas are related to thioamides, e.g. $RC(S)NR_2$, where R is methyl, ethyl, etc.

1. EXPERIMENTAL

1.1 Materials

In this investigation Thiourea Analar grade (SRL) were used as supplied and purity was cheked by its melting point. All other chemicals used in this investigation were of analytical reagent grade. Solution of $HClO_4$ was prepared by diluting known volume of acid in water. The prepared solution was standardized by titration with previously standardized NaOH using phenolphthalein as an indicator. Doubly distilled analytical grade DMF (SRL) was used. And all other Chemicals used were of analytical grade with 99.9% purity.

1.2 Synthesis of Pyridinium Chlorochromate

Pyridinium chlorochromate was synthesized by the method of Corey and Suggs[7] and Agrawal[8]. To 184 ml of 6 M hydrochloric acid (1.1 mol.) was added 100 g (1.0 mol) of CrO_3 rapidly with stirring. After 5 min. the homogeneous solution was cooled to 0°C and 79.1 g (1.0 mol) of pyridine was carefully added over 10 min. recooling to 0°C gave a yellow orange solid which was collected on a sintered glass funnel and dried for 1 hr in vacuum; yield 172.9 g (80 %). The solid is not appreciably hygroscopic and can be stored for extended periods at room temperature without change. Purity was checked by iodometrically, melting point, elemental analysis and by the IR and UV-VIS spectral analysis [U. V. - λ_{max}=354 nm; I. R. - ν_{max} (KBr) = 3066, 2033, 1898, 1599, 1533, 1485, 1033, 949, 750 cm^{-1}]

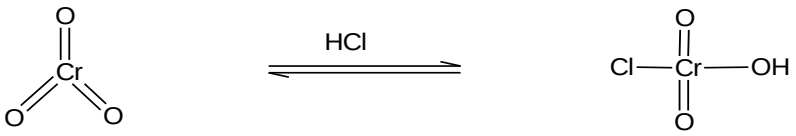

[Chlorochromic Acid]

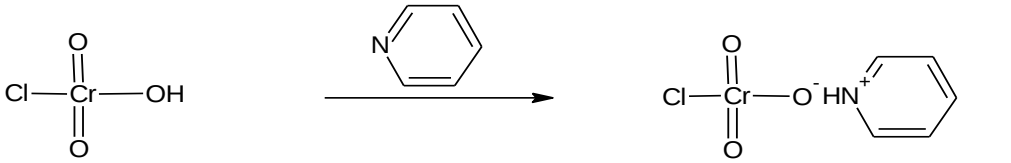

[Chlorochromic Acid] **[Pyridinium Chlorochromat**

1.3 Method

The measurements of rate were carried out at 27 ± 0.1 ºC in 0.3 mole dm^{-3} $HClO_4$ under the condition [Thiourea] >> [PCC], in the solvent system of 50-50 % (v/v) DMF-H_2O. The reaction was initiated by mixing a calculated amount of thermostatted pyridinium chlorochromate in to the reaction mixture. The progress of the reaction was followed by measuring the absorbance of PCC at 354 nm in 1 cm cell placed in the thermostatted compartment of JASCO model 7800 UV/VIS spectrophotometer.

The kinetics run were followed for more then 60-70% completion of the reaction and good first order kinetics were observed. Pseudo-first order rate constant k_{obs} were obtained from the slope of the plots of log (absorbance) versus time.

1.4 Stoichiometry and Product analysis:

To determine the stoichiometry of reaction, a known slight excess of pyridinium chlorochromate was added to a known amount of thiourea, by keeping constant all other condition of reaction, and after 12 hours the residual pyridinium chlorochromate was determined spectrophotometrically at 354 nm. The results indicated that one mol of PCC consumed three mol of thiourea for complete oxidation. The stoichiometry of the reactions was found correspond to the equation.

At the completion of the reaction between concentrated solutions of H_2NCSNH_2 and PCC, 200 ml of ethanol and 60 ml of concentrated HCl were added to the reaction mixture. It resulted in the formation of white crystals that were filtered, washed and dried in a vacuum desiccator. These crystals decomposed at 168 ˚C indicating that the crystals are those of formimidine dihydrochloride.[9] The oxidation product of thiourea is formamidine disulfide[10] and the dihydrochloride salt is formed in presence of concentrated hydrochloric acid.[10] The other oxidation product was characterized to be Cr(III) by comparing the spectra.

The observed Stoichiometry may be represented as

$$2\ Cr(VI) + 6\ SC(NH_2)_2 \longrightarrow 3\ NH_2(NH)CSSC(NH)NH_2 + 2\ Cr(III) + 6\ H^+$$

1.5 Test for Free Radicals:

The reaction mixture was treated with required amount of acrylonitrile (pre-washed with aqueous NaOH followed by washing with distilled water) under nitrogen atmosphere. Milky appearance in the solution was not observed but rate of reaction decrease drastically which indicated the presence of free radicals in the reaction.

2.0 Result and Discussion

2.1 Effect of Oxidant Concentration on Rate of Reaction

The reaction has been investigated by varying pyridinium chlorochromate concentration to see the effect on rate of oxidation by keeping the other conditions constant. The rate constant did not change with increase in concentration of pyridinium chlorochromate. Table-1.The logarithm of concentration of pyridinium chlorochromate decreases linearly with time, thereby showing that the rate law of the reaction is first order with respect to [PCC].

Table1. Variation of rate with PCC, Thiourea, perchloric acid concentrations, DMF % and temperature

10^3 x [PCC] mol dm^{-3}	10^2 x [Thiourea] mol dm^{-3}	10^2 x $[H^+]$ mol dm^{-3}	Temp. (k)	DMF: H_2O % (V/V)	k_{obs} x 10^5 s^{-1}
2.0	2.5	1.0	300	50:50	33.57
2.25	2.5	1.0	300	50:50	31.96
2.50	2.5	1.0	300	50:50	32.62
3.0	2.5	1.0	300	50:50	32.77
2.5	**3.0**	1.0	300	50:50	39.56
2.5	**2.75**	1.0	300	50:50	35.30
2.5	**2.50**	1.0	300	50:50	32.61
2.5	**2.25**	1.0	300	50:50	31.45
2.5	**2.0**	1.0	300	50:50	28.78
2.5	2.5	**0.0**	300	50:50	02.50
2.5	2.5	**1.0**	300	50:50	32.61
2.5	2.5	**2.0**	300	50:50	55.64
2.5	2.5	**3.0**	300	50:50	76.75
2.5	2.5	**4.0**	300	50:50	95.94
2.5	2.5	**7.0**	300	50:50	158.51

2.5	2.5	**10.0**	300	50:50	217.49
2.5	2.5	1.0	**298**	50:50	30.37
2.5	2.5	1.0	**300**	50:50	32.61
2.5	2.5	1.0	**303**	50:50	35.62
2.5	2.5	1.0	**308**	50:50	41.56
2.5	2.5	1.0	**313**	50:50	58.77
2.5	2.5	1.0	**318**	50:50	76.75
2.5	2.5	1.0	**323**	50:50	86.36
2.5	2.5	1.0	300	**70 :30**	64.38
2.5	2.5	1.0	300	**60:40**	68.13
2.5	2.5	1.0	300	**50:50**	32.62
2.5	2.5	1.0	300	**40:60**	70.92
2.5	2.5	1.0	300	**30:70**	73.12
2.5	2.5	1.0	300	**20:80**	74.89
2.5	2.5	1.0	300	**0.0:100**	78.54

2.2 Effect of Substrate Concentration on Rate of Reaction

The effect of thiourea concentration was studied at constant pyridinium chlorochromate concentration, $[H^+]$ and temperature, the rate of reaction increased with an increase in the concentration of thiourea from 2.0 x 10^{-2} to 3.0 x 10^{-2} mole/dm^3 (Table-1). The plot of $\log k_{obs}$ versus log [Thiourea] [Figure-1] was linear with positive slope value =0.848, indicating fractional order with [Thiourea]. The plot of $1/k_{obs}$ versus 1/[Thiourea], [Figure-2] gives straight line with positive intercept, which indicates that Michaelis–Menten type kinetics is followed with respect to thiourea. Complex formation between thiourea and pyridinium chlorochromate is also indicated by shifting of λ_{max} from 354 to 340nm. Although intercept is very small it may be due to highly reactive complex.

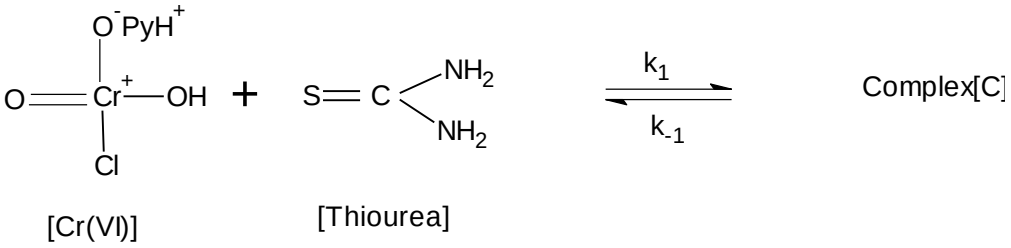

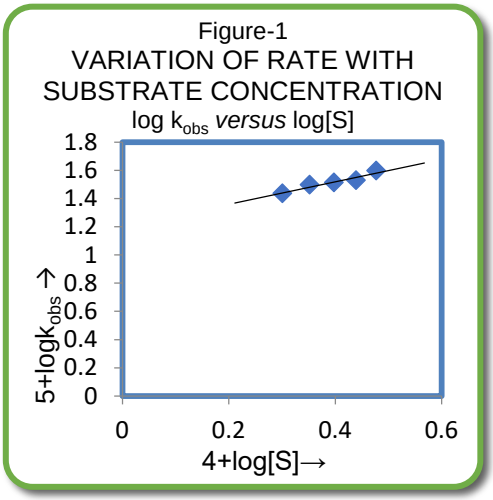

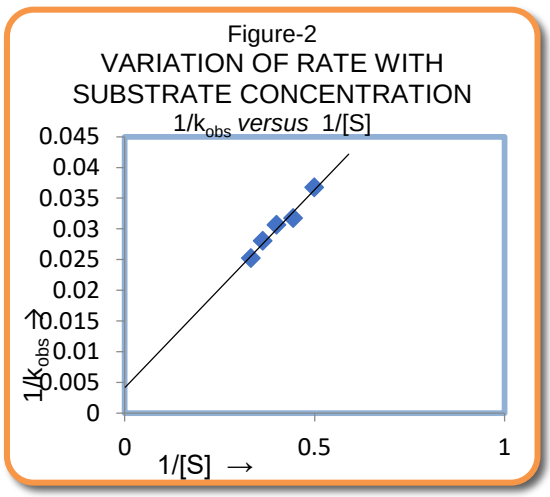

2.3 Effect of Hydrogen Ion Concentration on Rate of Reaction

The reaction was carried out in the concentration of 1.0 $x10^{-2}$ to10 $x10^{-2}$ mole/dm^3 by keeping remaining other conditions constant of the reaction, to find out the effect of hydrogen ion concentration on rate of reaction. The results of the effect of perchloric acid concentration on rate of reaction are summarized in Table-1. In general, rate constant increases with increase in hydrogen ion concentration. A plots of $logk_{obs}$ versus log[$HClO_4$] [Figure-3] are a straight line with a positive slope **≈1**. This shows that reaction is of first order with respect to the hydrogen ion concentration. The result are similar to the chromium(VI)[11], 12-tungstocobaltate(III) ion[12], methylene blue[13] and octacyanomolybdate(V) ion[14] oxidation of thiourea. M. Mehrotra and R. N. Mehrotra[1] suggested protonated thiourea as reactive species in oxidation of thiourea by 12-tungstocobaltate(III) ion. The formation of a protonated species of PCC has been also reported[15-18]. Under the present experimental conditions, the possible protonated species may be either PCC or thiourea. If both PCC and thiourea are the protonated species, the rate law predicts a second-order dependence of the rate on [H^+], which is contrary to experimental results. So that the PCC is only the protonated species in this reaction and we also considered protonated pyridinium chlorochromate in the oxidation of amino acids.

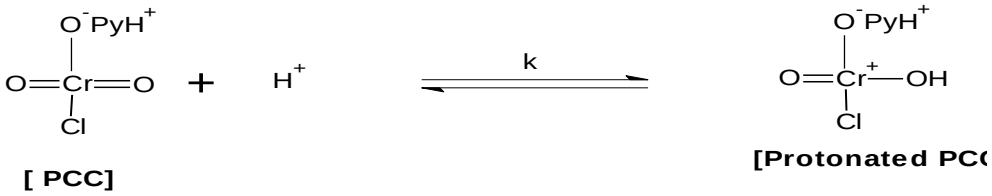

In the absence of perchloric acid the reaction is very slow, it shows that the hydrogen ion act as catalyst in the reaction. Protonated thiourea does not take part in reaction as it will decrease complex formation & hence will decrease rate which was not observed, with there are large no of reports which have reported participation of protonated thiourea.

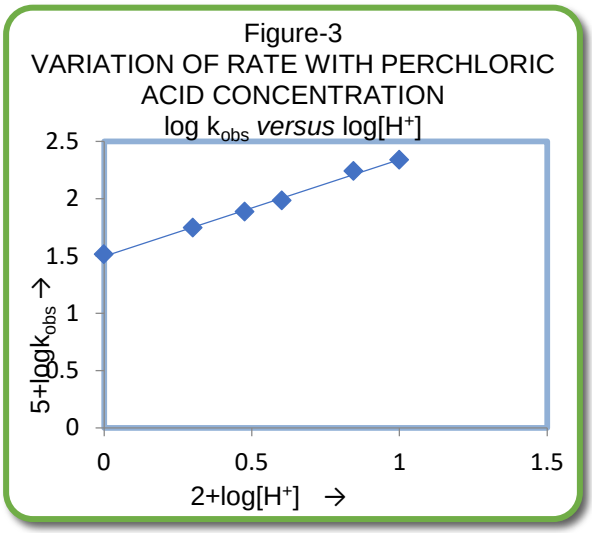

2.4 Effect of Temperature on Rate of Reaction

To find out the effect of temperature on oxidation reaction, the reaction was carried out at different temperatures. The rate constant of the reaction was found to increase with an

increase in temperature. The results are given in table-1. The plots of log k_{obs} versus 1/T are linear (figure -4), this shows that Arrhenius equation is valid for these oxidation reactions.

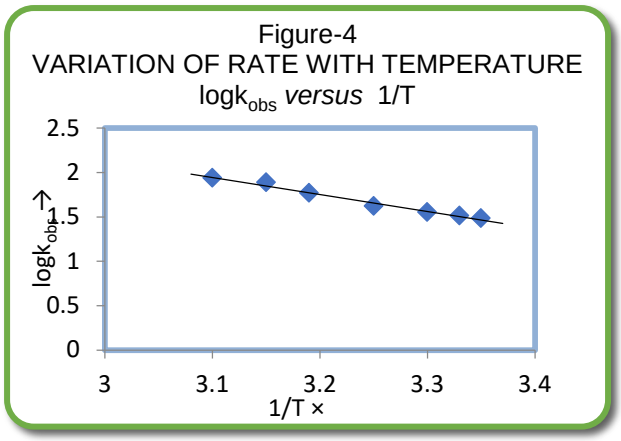

2.5 Effect of Ionic Strength on Rate of Reaction

To determine the effect of ionic strength, the reaction was studied in range of Debye-Huckel Limiting Law (below 0.01 M) by varying the sodium sulfate concentration. It has been observed that there was no significant effect of ionic strength on the rate. This indicates that the reaction may be between an ion and a neutral molecule or between neutral molecules[19].

Table 2 Variation of rate with ionic strength.

[PCC] = 2.5 x10^{-3} mol dm^{-3} Temperature = 300 K
[$HClO_4$] = 0.01 mol dm^{-3} DMF = 50 %(v/v)
[Thiourea] = 2.5 x10^{-2} mol dm^{-3} Water = 50 %(v/v)

[Na_2SO_4]× 10^3 mole/dm^3	5.0	6.0	7.0	8.0	9.0	10.0
k_{obs} × 10^5 sec^{-1}	30.15	30.70	31.80	32.35	32.24	30.90

2.6 Effect of Dielectric Constant on Rate of Reaction

The effect of variation in dielectric constant on rate of reaction has been studied by varying DMF% in the reacting solution by keeping other conditions constant (table-1). The result shows the rate of reaction increased with increase in dielectric constant of the reaction medium. The plots of log k_{obs} versus 1/D are straight lines with negative slope (figure- 5). Amis[20] had shown that in a linear plot of logk_{obs} versus 1/D indicates two dipoles or an ion-dipole reaction. In the present investigation a plot of logk_{obs} versus 1/D gives a straight, clearly supporting that there is an involvement of two dipoles or an ion-dipole in the rate determining step.

2.7 Effect of $MnSO_4$ on Rate of Reaction

It was observed that an addition of Mn(II) ions retard the rate of reaction with increase in concentration of Mn(II) ions(Table-3). The result is similar with the observation of Zaheer Khan et al[11] in the oxidation of thiourea by chromium (VI).Cr(IV) combines with Mn(II) to give Mn(III) & Cr(III) Mn(III) is slow oxidant than Cr(IV) in this low acidic conditions.

Therefore decrease in rate by addition of Mn(II) supports formation of Cr(IV) in the reaction course.

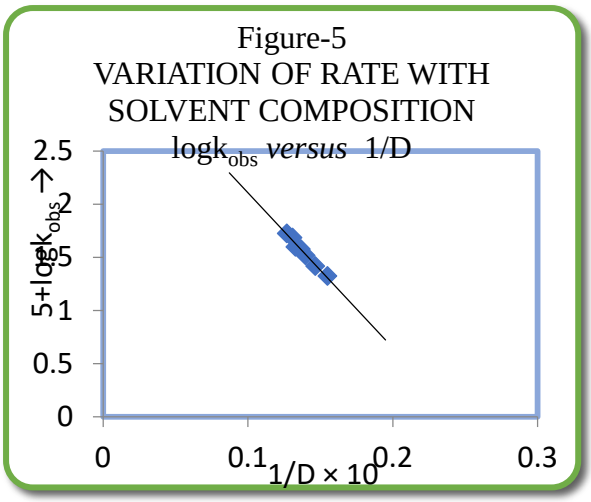

Table- 3: Variation of Rate with $MnSO_4$ Concentration

[PCC] = 2.5 x10^{-3} mol dm^{-3} [$HClO_4$] = 0.01 mol dm^{-3}

[Thiourea] = 2.5 x10^{-2} mol dm^{-3} Temperature = 300 K

DMF: Water = 50:50 %(v/v)

[$MnSO_4$]× 10^3 mole/dm^3	0.0	2.0	4.0	5.0	7.0	9.0	10.0
k_{obs} × 10^5 sec^{-1}	32.60	30.80	28.50	25.15	23.27	21.20	20.90

3.0 Mechanism

On the basis of above experimental results the following reaction mechanism has been proposed for the oxidation of thiourea.

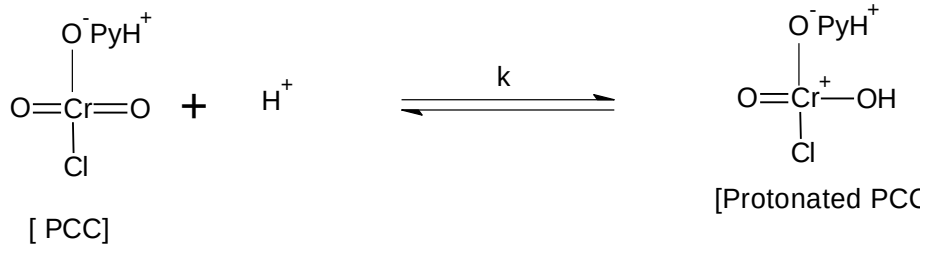

[PCC] [Protonated PCC

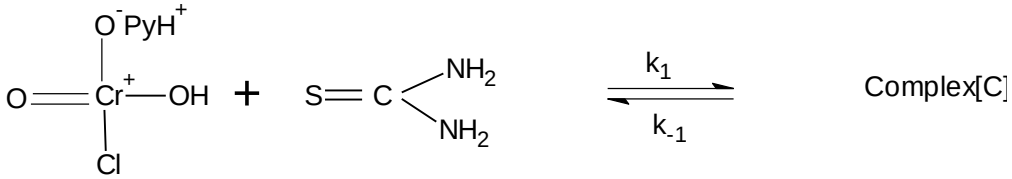

[Cr(VI)] [Thiourea]

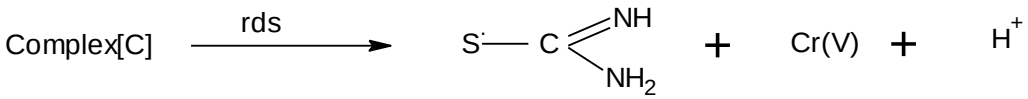

Free Radicl

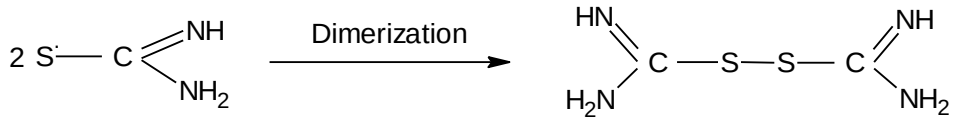

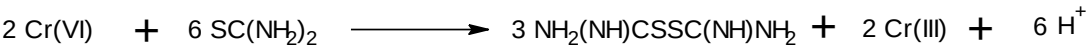

$$2\ Cr(V) \longrightarrow Cr(VI) + Cr(IV)$$

$$2\ Cr(VI) + 6\ SC(NH_2)_2 \longrightarrow 3\ NH_2(NH)CSSC(NH)NH_2 + 2\ Cr(III) + 6\ H^+$$

4.0 Rate Law

On the basis of above mechanism the rate law can be expressed as:

Rate of reaction $= -\frac{d[C]}{dt}\ \alpha\ [C]$

$= k^{`}\ [C]$ 1

Concentration of complex, [C] can be calculated by applying steady state concept.

Rate of formation of complex = Rate of disappearance of complex

$k_1 [TU] [PCC]_{prot.} = k_{-1} [C] + k^{`} [C]$. ………………. 2

Since

$[PCC]_{total} = [PCC]_{prot.} + [C]$

Therefor

$[PCC]_{prot.} = [PCC]_{total} - [C]$ . . ..…………….. 3

Hence

$k_1 [TU]\ \{[PCC]_{total} - [C]\} = (k_{-1} + k^{`})\ [C]$

$k_1 [TU] [PCC]_{total} - k_1 [TU] [C] = (k_{-1} + k^{`})\ [C]$

$k_1 [TU] [PCC]_{total} = k_1 [TU] [C] + (k_{-1} + k^{`})\ [C]$

$k_1 [TU] [PCC]_{total} = \{k_{-1} + k^{`} + k_1 [TU]\}\ [C]$

$$[C] = \frac{k_1\ [TU]\ [PCC]_{total}}{k_{-1} + k^{`} + k_1\ [TU]}$$

$$= \frac{[TU]\ [PCC]_{total}}{\frac{k_{-1} + k^{`}}{k_1} + [TU]}$$

$$= \frac{[TU]\ [PCC]_{total}}{k_m + [TU]}$$

Hence

$$Rate = k^{`}\ [C]$$

$$= k^{`}\ \frac{[TU]\ [PCC]_{total}}{k_m + [TU]}$$

$=k\ [PCC]_{total} = k_{obs}\ [PCC]_{total}$ (when [TU] = constant)

Where

$$k_{obs} = k` \frac{[TU]}{k_m + [TU]}$$

$$\frac{1}{k`_{obs}} = \frac{k_m}{k`} \frac{1}{[TU]} + \frac{1}{k`}$$

There for k_m can be calculated by intercept of plot 1/ k_{obs} versus 1/ [TU].

CONCLUSIONS

The reaction is of first order with respect to [PCC], [Thiourea], and [H^+] ion. The study on the oxidation of Thiourea by pyridinium chlorochromate in DMF-water media in the presence of perchloric acid reveals that the neutral Thiourea take part in the reaction, protonated Thiourea is not involved in the reaction. The Michaelis–Menten type kinetics is observed with respect to Thiourea. Although the intercept value is very small but the value indicates the formation of complex which may be highly reactive so concentration will be very small at any time. The reaction was carried out at different temperatures. Arrhenius equation is valid for temperature range Studied. The thermodynamic parameters indicate that the reaction is entropy controlled.

The overall mechanistic sequence described here is consistent with the product analysis and by kinetic and mechanistic studies.

ACKNOWLEDGEMENT

Author are thankful to Prof. B. L. Hiran (Retd.) Dept. of Chemistry, University College of Science, Monan Lal Sukhadia University, Udaipur for their support and valuable suggestion's.

References:

1. M. K. Mahanti and K. K. Banerji; J. Indian Chem. Soc., 79, 31 (2002).
2. V. Sharma, P. K. Sharma and K.K. Banerji; J. Indian Chem. Soc. 74 (8), 607 (1997).
3. A. Bhandari, P. K. Sharma and K.K. Banerji; Indian J. Chem. 40(A), 470, (2001).
4. R. Kumbhat and V. Sharma; J. Indian Chem. Soc., 81, 745 (2004).
5. K. K. Adari, A. Nowduri and P. Vani; J Trans. Metal Chem., 31(6), 745 (2006).
6. B. L. Hiran, S. Jain and C. V. Bhatt: e-journal of Chem; 6(1), 237 (2009).
7. Core E.J. and Suggs W.T.; Tetrahedron Lett.; 31, 2647(1975).
8. Agrawal S.P., Tiwari H.P. and Sharma J.P.; Indian J. Chem.; 17, 300(1979).
9. Priestler P.W. and Berger L.; J. Am. Chem. Soc.; 69, 232(1947).
10. Priestler P.W.; J. Am. Chem. Soc.; 71, 2849(1949).
11. Zaheer Khan, Mohammad Yousuf Dar, Prabijna S S Babu & Kabir-ud-Din; Indian Journal of Chemistry; 43A(5), 1060(2004).
12. Mehrotra M. and Mehrotra R.N.; Dalton Trans.; 3606 (2003).
13. Bhargava R. and Mishra K.K.; Phosphorus, Sulfur, and Silicon and the Related Elements; 63(1&2), 71(1991).
14. Adegboyega Olatunji M. and Rosaline C. Okechukwu; Transition Metal Chemistry; 12(3), 205(1987).
15. Hiran B.L., Jain S. and Bhatt C.V.; E-journal of Chem.; 6(1), 237 (2009).
16. Seth M., Mathur A. and Banerji K.K.; Bull Chem. Soc. Jpn.; 63, 3640(1990).
17. Sharma P.K., and Banerji K.K.; J. Indian Chem. Soc.; 74, 607(1997).
18. Kumbhatand R., Sharma V.; J. Indian Chem. Soc.; 81, 745(2004).
19. Kabilan S. and Ganapathy K.; Int. J. Chem. Kinet.; 21, 423(1989).
20. Amis E.S.; J.Chem.Educ.; 30, 351(1953).

CORPORATE SOCIAL RESPONSABILITY: FROM EMERGENCE TO PRESENT SCENARIO

- **PREETI SHUKLA**
(UGC-NET), Research Scholar
Department of Commerce, NEHRU GRAM BHARATI
(Deemed to be University) JAMUNIPUR,
KOTWA, PRAYAGRAJ.

ABSTRACT-

On every continent, corporate social responsibility is being practiced in a historical manner for several decades. 80% of the world's 250 largest companies actively issues corporate social responsibility (CSR) reports on their efforts towards sustainability. We've come a long way since companies first started to apply very early forms of CSR in the 1910s. So how did we get to where we are and how has CSR evolved over the years? The aim of this paper is to briefly discuss the overall journey CSR from its emergence to present scenario.

KEY WORDS: CSR, Sustainability, Philanthropic approach.

DEFINITIONS-

According to Philip Kotler and Nancy Lee define CSR as "a commitment to improve community well- being through discretionary business practice and contribution of corporate resource"

Whereas Mallen Baker refers to CSR as "a way companies manage the business processes to produce an overall positive impact on society."

The world business council for sustainable development is defines CSR as "the continuing commitment business to behave ethically and contribute to economic development while improving the quality of life of the workforce and their families as well as of the local community society at large"

PURPOSE OF STUDY-

This paper is mainly concern with the emergence of CSR step by step. Emergence of CSR globally and in India both aspects are taken together in this paper. The purposes of the paper are:

- To analyze the need of CSR globally as well as Indian context.
- To analyze various economist and world level originations views about Corporate Social Responsibility.
- To study the process of a Philanthropic approach of CSR becomes a legal obligation in India.
- To study the process of a Philanthropic approach of CSR becomes a legal obligation in India.
- To examine the present position of CSR in India after implementation of New Companies Act 2013.
- To examine the CSR activities pattern in changing situations.

Briefly discuss the overall journey of CSR from emergence to present scenario.

SIGNIFICANCE-

This study gives a significance contribution to the work of literature concerning the development of the concept of Corporate Social Responsibility and the implementation of socially responsible activities during 19th century to 21st century.

This study provides insights into the corporate strategies in response to various changes in the environment.

This study discuss that, in order to encourage companies to become more involved in socially responsible activities, the support of government and regulatory institutions and more active cooperation with business are necessary.

METHODLOGY-

Looking into requirement of the purpose of the research paper the research design employed for descriptive type. The secondary data is collected from various sources like journals, news articles, Books and Websites that have been observed and used which are enumerated and recorded.

LITERATURE REVIEW-

"Federation of Community Development Learning" in context of community development put emphasis on educating, enabling and empowering the local people.

The United Nations concentrates on self-reliance and creative features of a society to achieve its long run or short run aims, along with the roles of CSR in any business. UN explains "Community Development is an organized effort of individuals in collaboration with external organization." These external organizations, involves non-government as well as government organization, MNCs (Multi-National Corporations) and some Medium scale or Small Scale Enterprises (SMEs).

Keith Davis, explained "Corporate Social Responsibility" in terms of

"businessman decisions and actions taken for reasons at least partially beyond the firm's direct economic or technical interest". Davis expressed that CSR is responsible in providing financial profits to a company and its must be referred in decision making situations. Additionally, he declared that "some socially responsible business decisions can be justified by a long, complicated process of reasoning as having a good chance of bringing economic gains to the firm, thus paying it back for its socially responsible viewpoint".

Horrigan indicated CSR, at the "G8 Summit of World Leaders in 2007", "CSR has emerged clearly from a secondary global concern into the spotlight as primary international policy issue listed at par with climate change, international security, sustainable development and free trade and investment".

Auginis and Glavas presented a paper "What we know and don't know about CSR: A review and research agenda" made use of over 102 books and 588 published journals to form a structure of CSR activities and its outcomes which can affect the internal and external stake holders.

Auginis and Glavas, "Corporate Social Responsibility and Employee Engagement: Enable Employees to Employ More of Their Whole Selves at Work". The finding of their research determined the value of originality which means "being able to show ones whole self at work" which enhance the relation among involvement of employees and CSR.

HISTORY OF CSR-

Howard Bowen is the father of modern CSR. An American economist, he has been credited with coining the term "corporate social responsibility". In his landmark book "Social *Responsibility of Businessmen"* in 1953. According to Bowen, "CSR refers to the obligations of businessmen to pursue those policies which are desirable in terms of the objectives and values of our society" This has become the backbone by which modern CSR principles are based.

The seeds of corporate social responsibility (CSR) were starting to be sown, in the 1940s with the fallout of World War II, companies like Hormel, known for producing Spam, provided food supplies for those affected by the War. In 1950s, the Red Scare running rampant, corporate America was urged to expand business social responsibility as a means of aligning business interests with the defence of free-market capitalism.

In Atlanta a city in Georgia, in 1964, social conservatives refused to support an integrated dinner honoring Noble Prise winner Dr. Martin Luther king Jr. CocaCola, puts its foot down and forever changed Atlanta's history.

In 1982, an entrepreneur Paul Newman started, "Newman's Own", a line of food products. All of the company's after tax profits were donated to educational and charitable organizations. It was the first of its kind to offer consumer the ability to actively participate in a company's philanthropic approach through their products.

The 90s and 2000s, it was the start of the digital age, and with it, came greater awareness of global issues, from poor labour practices in China, to human rights violations in Africa. In response to these now global issues, President George HW Bush spearheaded a grassroots movement known as *Points of Light*, a volunteering program that mobilizes people to take action on the causes they care about through innovation programs, events, and campaigns.

As we enter the final stages of the 2010s, CSR has seemingly pivoted yet again with sustainability taking center stage. Climate change and environment has become a defining issue, and it's spurred the development of innovative new approaches to CSR strategy.

EMERGENCE OF CSR IN INDIA-

The history of CSR in India has its four phases which run parallel to India's historical development and has resulted in different approaches towards CSR.

The First Phase

The first phase (1850-1914) - In the first phase charity and philanthropy were main drivers of CSR. With the arrival of colonial rule in the India from the 1850s onwards the approach towards CSR changed, in the 19th century sum industrial families were strongly inclined towards economic as well as social consideration.

The Second Phase

The second phase (1914-1960) – In the second phase. During independence movement, there was increased stress on Indian industrialists to demonstrate their dedication towards the progress of the society. This was when Mahatma Gandhi introduced the nation of "trusteeship", according to which the industry leaders had manage their wealth so as to benefit the common man.

The Third Phase

The third phase (1960-1980)-the third phase of CSR had its relation to the element of "Mixed economy", emergence of public sector undertaking (PSUs) and lows relating labour

and environmental standards. PSUs were set up by the state to ensure suitable distribution of resource (wealth, food) to the needy.

The Fourth Phase

The fourth phase (1980 until the present)-In the 1990s the first initiation towards globalization and economic liberalization were undertaken.

All corporate should try and bring about change in the current social situation in India in order to have and effective and lasting solution to the social woes. Partnership between companies, NGOs and the government should be facilitated so that a combination of their skills such as expertise strategic thinking, manpower and money to initiate extensive social change will put the socio economic development of India on a fast track.

LEGAL FRAMEWORK OF CSR-

The first formal attempt of Government of India in 2009, by issuing of Corporate Social Responsibility Voluntary Guidelines by Ministry of Corporate Affairs (MCA). The Guidelines of 2009 were followed in 2011 by the National Voluntary Guidelines of Social, Environmental and Economic Responsibility of Business, issued by Ministry of Corporate Affairs (MCA).

The transition from a voluntary CSR regime to a regulated regime came when the Securities Exchange Board of India (SEBI) required the top 100 listed companies, as a part of clause 55 of the Listing Agreement, to mandatorily disclose their CSR activities in the Business Responsibility Reports(BR Reports) accompanying the Annual Reports.

Finally a landmark decision made by Government of India in 2013.India's new Companies Act 2013 has introduced the concept of Corporate Social Responsibility in India forefront. In India, the concept of CSR is governed by clause135 of the Companies Act 2013. With the implementation of the new Companies Act from April 1, 2014 **India has become the only country in the world with legislated Corporate Social Responsibility (CSR).**

The provision within the Act is applicable to companies with-

- An annual turnover of 1000 corers and more or • A net worth of 500 corers and more or
- A net profit of 5 corers and more.

The Act encourage companies to spend at least **2%** of their average net profit in the previous three years on CSR activities , as defines under schedule VII.

As per schedule VII of Companies Act 2013, items (i) to (x) and the entities relating there to, would qualify as CSR activities :-

i. Eradicating hunger, poverty and malnutrition, promoting preventive health care and sanitation and making available safe drinking water.

ii. Promoting education, including special education and employment enhancing vocation skill especially among children women elderly, and the differently abled and livelihood enhancement projects.

iii. Promoting gender equality ,empowering women , setting up homes and hostels for women endorphins , setting up old age homes day care centers and such other facilities for senior citizens and measure for reducing inequalities faced by socially and economically backward groups.

iv. Ensuring environmental sustainability ecological balance protection of flora and fauna, animal welfare, agro forestry, conservation of natural resources and maintaining quality of soil, air water.

v. Protection national heritage , art and culture including restoration of building and sites of historical importance and work of art ,setting up public libraries ,promotion and development of traditional and handicrafts.

vi. Measure for the benefits of armed forces veterans, war widows and their dependents.

vii. Training to promote rural sports nationally recognized sports Paralympics sports or Olympic sports.

viii. Contribution to the Prime Minister's National Relief Fund or any other fund set up by the Central Government for socio-economic development and relief and welfare of the scheduled caste, the schedule tribe, other backward classes, minorities and women.

ix. Contribution or funds provided to technology incubators located within academic institutions which are approved by the Central Government.

x. Rural development projects.

If the corporate fails to pay such amount, the Board shall surrender its report and ask for the explanation for not spending the amount.

Recently, companies amendment bill 2019 passed in Lok Sabha according to this, if the company not spend its CSR fund in a fixed time period then that amount is automatically deposited in central Government special account like clean Ganga fund, PM National Relief Fund.

Constitution of CSR committee- three or more directors, out of which at least one director shall be an independent director. If a private company having only two directors on its Board shall constitute its CSR Committee with two such directors.

Calculation of Net Profit- The CSR rules have clarified that in order to determine the 'Net Profit', divided income received from another Indian company or profits made by the company from its overseas branches have been excluded. Moreover, the 2% CSR is computed as 2% of the average net profits made by the company during the preceding three financial years. Computation of net profit for section 135 is as per section 198 of the Companies Act, 2013 which primarily is

NET PROFIT BEFORE TAX.

Treatment of unspent amount- Unspent amount relating to an ongoing project under the company's CSR policy, the amount shall be transferred by the firm in less than 30 days from the end of the financial year to an exclusive amount to open by a firm in any schedule bank.

The amount shall be designated as 'Unspent Corporate Social Responsibility Account', and the fund shall be used towards its obligations under the CSR policy within a period of three financial years from the date of transfer.

Fines and Penalties for non-compliance-In case a company fails to comply with the provision relating to CSR spending, transferring and utilising the unspent amount, the company will be punishable with a minimum fine of Rs 50,000 which may increase to Rs 25 lakhs. Further, every officer of such company who defaults in the compliance will be liable for a punishment which is imprisonment for a term which may extend to three years or with a minimum fine of Rs 50,000 which may increase to Rs 5 lakhs, or both.

CORPORATE SOCIAL RESPONSIBILITY IN PRESENT SCENARIO-

Another notification was issued on March 28, 2020, which specified that companies can indulge in CSR activities related to COVID-19 by donating the money to Prime Minister's Citizen Assistance and Relief India is the first country in the world to make Corporate Social Responsibility (CSR) mandatory following an amendment the Companies Act, 2013 in April 2014. The provision of CSR may be said to be successful in India as more and more companies are now indulging in CSR activities. As per the CRISIL CSR yearbook, 2017, 1,505 of the listed companies at Bombay Stock Exchange were eligible under the section 135 criteria. 77% of the companies reported spending of CSR activities in 2016, in contrast to 75% companies in 2015. The CRISIL CSR Yearbook, 2019, stated that in 2018, 1,913 companies met the criteria under the section 135 of the Companies Act, 2013; of which 1,246 companies spent the funds on CSR (more than $2/3^{rd}$ spent over 2% of their net profits and 153 companies, i.e. 12% spent 3% or more).

The PRIME Database reports that the CSR spend has overall increased by 7% to

Rs 9,034 Crores from 2015-2016 to 2016-2017.It was reported in India's CSR Reporting Survey that N100 companies that had spent 2% or more for CSR activities in the year 2018-2019.

COVID-19 had a significant impact on CSR activities, from policy change to diversion of funds towards COVID-19 related issues. The following policy changes were implemented by the government-

1- Funds' and 'Chief Minister's Relief Funds'. It also allowed for 100% tax exemption for the donated fund under the Income Tax Act, 1961. On March 23, 2020, Ministry of Corporate Affairs (MCA) introduced the first notification which declared COVID-19 to be notified disaster and allowed the companies to spent CSR funds under schedule VII activities related to promoting healthcare, sanitation and disaster management.

2- In Emergency Fund or PM CARE FUND, This however confusion as to whether only this fund was a permissible expenditure under schedule VII. Therefore, MCA issued another notification on April 10, 2020, clarifying the areas will CSR funds can be utilized and contributions made to the 'state Relief'.

CSR is taking some burden off frontline health workers by supplementing public health system, supplying hygiene kits and supporting the establishment of temporary quarantine facilities. Companies have responded to the needs of frontline workers to stay safe and equipped to respond to the COVID-19.

CRISIL CSR Yearbook 2020 having the title **"Doing good in bad times"** mentioned that about 84 companies contributed Rs 7,537 crores during MarchMay 2020, which can be classified as CSR spend.

CONCLUSION-

Nowadays it is necessary for corporation to create a fine balance between earning profits and providing value to the society. This not only helps in making the society better place, but also ensuring a better brand image and providing competitive advantage to the company. While the CSR legislation was introduced with a positive motive of helping the society, there is still a long way to go to successfully implement the provision pertaining to CSR. Therefore, there is a need to revisit the legislation from the impact perspective rather than monetary perspective to ensure a better outcome from CSR activities.

It also should be noted that socially responsibility companies are contributing to the safety and well being of communities and society in general in time of crisis.

REFERENCES-

1. Background Material on CSR by companies Act 2013
2. P. Kotler and N Lee, Doing the most for your company and your cause. Hoboken, United state of: john Wiley and sons , Inc , 2008
3. www.mca.gov.in
4. www.csr.gov.in
5. www.csrbox.org
6. www.indiacsr.org
7. www.mca.gov.in/pdf/Notification_10042020.pdf
8. www.crisil.com
9. www.wap.business-standerd.com
10. http://wap.business-standerd.com
11. http://economictimes.indiatines.com

Title of the paper: Climate Resilient Water Management and Application of Smart Water Technique

- Dr. Monica Ahlawat*[1] & Dr. Debasri Mukherjee[2]

[*]Corresponding Author: Dr. Monica Ahlawat[1],

Associate Professor, Dr. Bhim Rao Ambedkar College, University of Delhi

[2]Senior Research Officer, SIGMA Foundation, Kolkata.

Abstract:

Climate change has been emerged as a very important force in affecting the lives and livelihoods of people across the world, specifically for those living at the margins. Extreme events like drought, cyclone, untimely rain and floods are devastating vast crop areas and the farmers are suffering loss of crops and livelihoods. Also, water scarcity due to drought or unserviceability of Water, Sanitation and Hygiene infrastructures due to submergence of the facilities during flood or damage due to cyclone are causing disruption of basic facilities. The effects of climate change are most likely not reversible. The situation will worsen due to climate change because of non-availability of climate resilient infrastructure and inability to adapt climate resilient practices at the community and household level. To efficiently use the water resources, one should have robust metrics to measure or assess resilience. The current research paper emphasis on impact of climate change on agricultural practices in two blocks (Chanditala I and Jangipara) of Hooghly district in West Bengal considering a critical zone (as per CGWB) from the groundwater point of view. Agriculture in both the blocks is vulnerable due to climate change because crop production is influenced by rainfall, availability of water and weather conditions. The high prevalence of small and marginal landholding in the study area those who are resource poor to adapt measures to promote resilience can consider to be the high risk group regarding livelihood context. Also, the farmers of Hooghly district is highly dependent on abstracting ground water in spite of deepening ground water level and increasing cost of water, since they have no alternative for their livelihood. The research findings in this paper clearly indicated that many farmers are aware of possible ways of farming requiring less water but only a very few practiced that. Those who are aware did not have the technical skill or money to reduce dependence on water for farming and looking for low cost sustainable solution.

Keywords: *Agricultural Practices; Climate Change; Climate Resilient Infrastructure; Livelihoods; Water Scarcity.*

Background:

Climate change has been emerged as a very important force in affecting the lives and livelihoods of people across the world, specifically for those living at the margins. The developing and less developed countries are more prone to vulnerabilities and hazards due to extreme events as well as variability in climatic parameters like rainfall and temperature. It has been projected by the experts that by the end of the 21st century the atmosphere of the earth may become warmer by between 0.3 and 5°C3 (IPC, 2013). With a 2°C global temperature rise, up to 10 million more people could be affected by coastal flooding each year. With a 4°C temperature rise, a 50 percent decrease in water availability could occur in East Africa and the Middle East (Stern, 2007). In developing countries, the incidence of diarrhoea is expected to increase by around 5 percent for every 1°C increase in temperature

(Campbell-Lendrum and Woodruff, 2007). Since the original Rio Earth Summit in 1992, floods, droughts and storms have affected 4.2 billion people (95 percent of all people affected by disasters) and caused US$1.3 trillion of damage (63 percent of all damage) (GWP and UNICEF, 2014). Climate change is predicted to affect human civilization in a way which is unprecedented in the recorded history of the mankind. Extreme events like drought, cyclone, untimely rain and floods are devastating vast crop areas and the farmers are suffering loss of crops and livelihoods. Also, water scarcity due to drought or unserviceability of Water, Sanitation and Hygiene (WASH) infrastructures due to submergence of the facilities during flood or damage due to cyclone are causing disruption of WASH services. This will have serious implications on the health of the community, especially children and women, whose drudgery increases many-folds due to unavailability of water for domestic use and lack of proper sanitation facilities.

Climate change will have most severe impact on the availability of water for human use. There will be acute conditions of water shortages as well as excess rainfall and flooding (Govt. 2015). Also, the quality of water resources will worsen. As a result, inequality in access to adequate and safe water will also exacerbate in future. That will have serious implications for India, which is already a water stressed country. Per capita water availability in India is now below 1,500 cubic metres. Half a century ago, it was 5200 cubic metres (GWP and UNICEF, 2014). The increasing usage of water due to population growth is causing pressure on availability of water, which will be further affected due to climate change. This calls for a need to augment water supply in water-rich regions lacking infrastructure and to augment water availability as well as to manage water demand in water-scarce regions. Wise water management will be one of the key goals to overcome the ensuing problem, as set out in the Paris Agreement[1]. Creative and imaginative governance is needed to manage this precious resource. To avoid impending catastrophe, India needs to bring in or develop technology to help harness water more efficiently and build long-term water conservation plans.

The major sources of freshwater in the world are groundwater, surface water and sub-surface water, which includes river, streams, natural springs and waterfalls. Groundwater is one of the most important sources of fresh water for the human settlement and is used for all kinds of domestic and economic purposes (Bhattacharjee, 1982). Globally it is estimated that around 3.2 billion people live in agricultural areas with high to very high water shortages or scarcity, of whom 1.2 billion people, roughly one-sixth of the world's population, live in severely water-constrained agricultural areas (FAO, 2020). Rapid urbanisation and population growth, especially in developing countries is leading to faster rate of groundwater depletion which is a serious threat to sustaining human settlement in those areas (Lal, 2009). Worsening water quality is another problem, which will also be affected by climate change.

The State of West Bengal in India reports a very poor groundwater quality situation and the state is one of the worst affected in terms of arsenic pollution and iron content in drinking water. Climate change will affect both availability of water and its quality and there is need for climate resilience in ensuring sustained water supply services of prescribed water quality. Within this situational backdrop, the Government of India (GOI) has launched the Jal Jeevan Mission (JJM) in 2019 for providing Functional Household Tap Connection (FHTC) to every rural household (HH) by 2024. Further, as per the objective of JJM, it has to be ensured that minimum of 55 Litre Per Capita Per Day (LPCD) safe water is delivered at the premises of

[1] The PARIS AGREEMENT is a legally binding international treaty on climate change. It was adopted by 196 Parties at COP 21 in Paris, 2015, https://unfccc.int/process-and-meetings/the-paris-agreement/the-paris-agreement

every HH. Source sustainability, water safety, efficient supply arrangement, responsive service delivery and resilience to climatic variability will be essential to attain the goal. This initiative was preceded by launching the Swachh Bharat Mission (SBM) in 2014 for making the country Open Defecation Free (ODF) and adopting other sanitary and hygienic practices.

Study area:

The current paper is based on the two blocks in West Bengal. The location of the two study blocks Chanditala I and Jangipara are located in Hooghly district in West Bengal, which is shown in Figure1.1 below. Chanditala I and Jangipara blocks are situated in the eastern part of the district. Both the blocks are facing declining ground water level. The areas lies within the interfluve where the river Hugli flows on the east and the river Damodar on the west. The area is a meander flood plain which represents the newer alluvium (National Bureau of Soil Survey and Land Use Planning, 2001). The Flood-plain is an area of land adjacent to a stream or river which stretches from the banks of its channel to the base of the enclosing valley walls, and which experiences flooding during periods of high discharge. The soils usually consist of clays, silts, and sands deposited during floods (Bandyopadhyay, 2007). These are accumulations of sand, gravel, loam, silt, and/or clay, and are often important aquifers, the water drawn from them being pre-filtered compared to the water in the river. In the Flood plain groundwater generally occurs within a thick zone of saturation under water table condition in the entire study blocks.

Figure 1.1: The Study Area

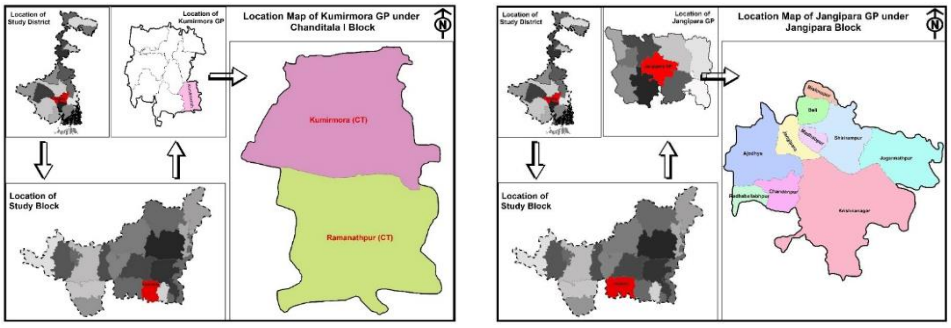

Figure 1.2: The Study Area in West Bengal

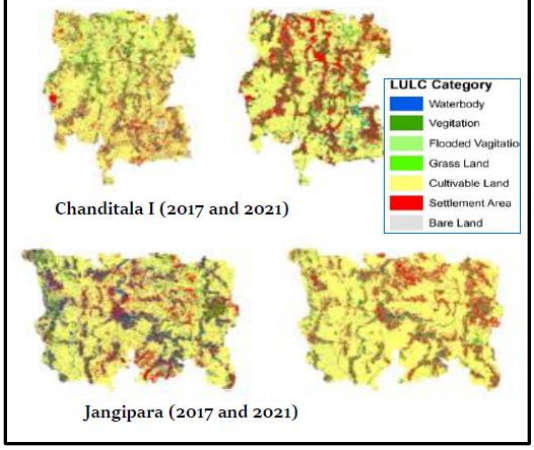

The areas are prone to flood due to excess rainfall/ release of DVC water and related issues. The land use land cover (LULC) in this two blocks of Hooghly districts have been worked out from satellite data (Figure 1.2). The LULCs and its changes show different patterns. The land-use in both the blocks of Hooghly (Chanditala I and Hooghly) is mostly cultivable land and built-up area (settlement). According to the secondary data the built-up area has increased by about 4% in Chanditala I block, whereas cultivable land has increased by 4.6% in Jangipara during the period 2017 to 2021. Significant decline is observed in cultivable land in Chanditala I, while decline in water bodies is observed in Jangipara (about 8.3%). The higher the vegetation coverage, the greater the chances of infiltration of precipitation and groundwater recharge after deducting the soil moisture and evapo-transpiration component. A higher percentage of built-up area indicates

lower chance of infiltration and higher runoff and therefore higher channel flow. The major livelihood of the area is agriculture. The main crops of the area are paddy, moong, varieties of Til (Sesame) and vegetables during kharif and wheat and vegetables during Rabi season.

Situational Assessment: Climate Resilience at Community Level and Farmers Groups:

Many scientific researches' have been conducted on various dimensions of climate change. Though adaptation of climate resilient practices has to be embedded in the community but there is inadequate study on the knowledge, attitude and practice related to climate change at the community level especially within the farmers groups. So, it is necessary to study the community level issues of climate resilience and how the community/farmers groups can be made more climate resilient. Such studies have to incorporate the concept of risk and its assessment through exploring the hazards, exposures, vulnerability and capacity (coping mechanisms, adaptive and mitigation measures) of climatic events on WASH services as well as on agriculture, which is the main source of livelihood in the rural areas of West Bengal. Keeping this in mind, UNICEF West Bengal in partnership with SIGMA Foundation, a non-for-profit organization and expert consultant, took up a study to assess the situation related to various aspects of climate resilience on the ground. The study area was the two blocks of West Bengal namely, Chanditala I and Jangipara in Hooghly district. These blocks are respectively categorized as critical and semi-critical from the point of view of exploitation of ground water. These two blocks are located within the DVCA (Damodar Valley Corporation Area), which manages one of the oldest irrigation systems in West Bengal.

Objectives of the Study:

The objectives for this study is to know the current status of water availability including that supplied from DVCA, use of water and the status of knowledge, attitude and practices on climate change and the coping mechanism followed by the community and farmers groups. The specific objectives of the study are as follows:

1. To assess the status of Knowledge, Attitude and Practices (KAP) related to climate change and the existing coping mechanism as well as to understand the communication need in making the community aware about climate change and adaptation of climate resilient practices related to water.
2. To assess the status of water availability, including that from DVCA, its use and sustainability.
3. To understand the status of agriculture in the context of water scarcity and changing climate scenarios as well as the climate-resilience of agricultural activities.
4. To understand the role of local government, i.e., the Gram Panchayats (GPs) in enabling and engaging community and farmers groups in ensuring Climate-Resilient Water Management (CRWM) and Integrated Water Management (IWM) also their level of awareness.
5. To analyse the disaster preparedness of community members and the GP in the study area.

Methodological Approach:

The study adopted a mixed method research design to carry out the situational analysis of climate-resilient water management within the community and farmers groups in the study area. The proposed methodology consists of four steps:

i) Desk review;
ii) Designing of samples & survey tools;
iii) Field survey;
iv) Analysis of data and report preparation.

i) Desk review: The study has reviewed the available secondary sources of information including published reports and research articles by national and international organizations as well as policy documents related to CRWM, socio-economic status and livelihood pattern. The aim of this review was to assess the current status of availability and management of water resources, equity in access to water and its use, impacts of climate change and adaptability of the communities and farmers groups, awareness on climate change related issues and relevant attitude and practices. The desk review helped to focus on the specific issues to be probed from different stakeholders.

ii) Sample design: This study adopted a mixed-method approach based on both quantitative and qualitative data. Appropriate sample sizes were decided for both these types of survey to ensure representation of the population based on the principles of statistics.

(a) Samples for quantitative survey: Villages were ranked according to the percentage of agricultural workforce (% cultivators as defined by Census 2011) to ensure the selection of both farmer and non-farmer community group. The strata were ranked according to the percentage of cultivators (among total workers) from highest to lowest and from each stratum selections were done. Community were also stratified according to their location within or outside the DVCA to compare the situation in the two different areas. Combining the two stratification criteria to ensure variability, the four combinations of villages in each block were considered. The sampling was done in total 10 Gram Panchayats covering a total of 10 villages in the two selected blocks.

(b) Samples for qualitative survey: The qualitative survey for the study was carried out with the help of semi-structured interview schedules using a purposive sampling technique. This sampling technique is dominantly used in qualitative studies in order to reach targeted respondents who would be able to give appropriate responses on the topic of enquiry. The sample size for the qualitative survey was determined to have in-depth insights on various aspects as well as to reflect the qualitative aspects of the issues probed through quantitative survey. This was done through Focus Group Discussions (FGDs) with various types of water users/managers within the community and Key Informant Interviews (KIIs) with the GP functionaries and farmers groups. Since the type of water related issues covering both availability and use within a block does not vary much within a block, large number of FGDs may have led to saturation of responses. Experience shows that a couple of FGDs for each type of stakeholder is usually enough to get the key insights.

Keeping that in mind, two KIIs were conducted in each block to get useful insights on the role of Gram Panchayat and also on the farmers' behaviour from two sample GPs of the block. For understanding various issues from the perspective of the community and farmers groups, two FGDs - one with GP Pradhan and one with farmers were conducted in each GP. FGD with farmers was conducted to assess the water use and management practices related to farming. The participants were selected from various social groups. Some of them were farmers and water sellers as well. All types of farmers having different sizes of agricultural land were considered along with the sharecroppers and farmers cultivating leased-in lands. There were total 12 FGDs (6 with farmers and 6 with community members), 6 KIIs with Gram Panchayat level Officials (Pradhan/Upa-Pradhan or Official) and 6 KIIs with water sellers. Thus, there

were total 24 FGDs/KIIs on the qualitative aspects of the study combining all the two blocks in the study area.

iii) **Field survey:** The field survey was done by experienced field investigators and there were two teams, one for each block. In each team there was one supervisor, an experienced staff member and two field investigators. The field work took place in two stages. In the first stage the mapping was conducted to identify targeted beneficiary exhaustively. Secondly, the field coordinators looked after all types of support, requirements of the field team members. All the ethical guidelines were maintained during the field survey. The field survey was carried out simultaneously in two blocks so that the same could be completed within stipulated time frame.

iv) **Data analysis and report writing:** The collected data was checked by domain experts. Quantitative data entry and processing was done before final analysis using statistical software packages (STATA). The analysis of quantitative data collected from the field involved descriptive statistics to understand the various components of water supply management for agricultural practices. On the other hand, the transcripts of the qualitative data were coded and entered into ATLAS Ti for textual analysis. There was data triangulation across various stakeholders for better insights.

Research findings from the ground level:

(i) Groundwater Availability and Agricultural Practices: Agriculture is a major livelihood option in the study area, especially in the two blocks of Hooghly district because of presence of fertile alluvial soil which is good for cultivation and also because it can hold more water. Agriculture in both the blocks is vulnerable to climate change because crop production is influenced by rainfall and availability of water and weather conditions. Indian agriculture is more vulnerable to climate change because (i) it is highly dependent on monsoon and (ii) high prevalence of small and marginal landholding who are resource poor to adapt measures to promote resilience. Lack of water or excess water may lead to decreased agricultural production. Difficulty in access to water may increase the price of water and thereby reduce the profit from agriculture. The income losses due to these vulnerabilities are significant. According to the Economic survey of 2017-2018, farm income losses are greater (16-18%) for unirrigated areas compared to irrigated areas.

(ii) Access to irrigation: On asking the farmers whether they bought water for farming or owned a bore well themselves, it was observed that as much as 61% of the farmers in the study area bought water for farming, which was found to be the highest in Chanditala I block (73.5%). Having own source of water was the highest (36.4%) in Jangipara. Therefore, most farmers had to buy water for irrigation or remained dependent on rain fed agriculture, which is more vulnerable to climate change.

(iii)Depth of groundwater: The average depth of the well in the study area, as reported by the farmers, was around 181 feet. That was maximum in Chanditala I (203 feet), followed by Jangipara (170 feet). It is worth mentioning that Chanditala I is a critical block, Jangipara is a semi-critical block. We have analysed the last 30 years ground water level data as observed from one selected 'Observation Well' of each of the 2 blocks[2]. The variation of ground water level over time shows that in the first two blocks it

[2] These are the observation wells maintained by the State Water Investigation Directorate at Jangipara points and the Janai Pz well which is located at the border of Chanditala I and Chanditala II blocks.

has been declining and has reached an unsustainable level in the recent years. Apart from heavy withdrawal of ground water, the satellite data of Chanditala I block shows that 33.6% of the block area is already built up compared to 26.4% in Jangipara. The built-up area is found to have increased by 4% annually in the last 4 years.

(iv) Sustainability of groundwater availability: Around 33.3% households in Jangipara and 11.8% households in Chanditala I reported of the need to increase the depth of the bore wells during the last 5 years. Abstraction of ground water has increased with more people using submersible pumps, which can pump out water from deeper depth. Abstraction of ground water was done through using submersible pumps in 88% cases in Chanditala I and Jangipara blocks. Importantly, 12.5% farmers in Jangipara reported using Centrifugal pumps and 5.9% farmers of Chanditala I block reported using of Centrifugal pumps as well as deep tube wells locally known as Mini. However, as the submersible pump is placed at a deeper level, consumption of energy and so the cost of water increases. Climate change will further worsen the situation unless measures for arresting decline in ground water level is taken immediately. Also, higher cost of irrigation will reduce the economic viability of agriculture.

(v)Perception of water availability in future: 92.7% farmers in Chanditala I to 69.7% farmers in Jangipara, reported that water will become scarce in future. So, the people are aware of the situation they are going to face. However, they neither know how the problem can be addressed effectively, as was expressed in the FGD (Focus Group Discussion), nor they are organized or empowered to address the problem. A high percentage of farmers (84.7%) in these blocks also stated that they will not be able to maintain farming activities at the same level if the problem of water persists.

Coping Mechanisms Practiced:

Farmers were asked whether they took any measure to reduce use of water to deal with the water crisis. There were multiple responses to this question. It is observed that the situation of all the blocks is alarming. There will be need for more intensive cropping in such a situation and consequently will place more pressure on existing groundwater resources. Communities will be faced with poverty and hunger, especially during hazardous events and will be forced to displace themselves in the urban peripheries. It has also been found in some studies that agricultural irrigation is going to be the main cause behind the rapid decline of groundwater level in most areas (Ramankutty et al. 2002). Studies have also found that due to agricultural market dynamics, farmers often shift to cash crops from traditional food crops which are more water-intensive. In a case study on China, it was found that water consumption for agricultural land increased from 14 % to 72 % in a period of only 20 years and there was rapid decline of groundwater table (Zhang et al.2014).

The most popular strategies of reduction in use of water were reduction in cropping area, switching to crop requiring less water or changes in timing of cultivation. However, there are differences in the opinions of farmers across the two districts. Most of the farmers (60%) mentioned of reduction in cropping area or switching to crop requiring less water (43%). In case of Chanditala I and Jangipara blocks, where more intensive agriculture is practiced, 29% and 38% farmers in respectively reported not to have taken any measure to reduce water use. This implies that as long as water is available, even with higher expenses, farmers are going for water intensive crops which is a non-sustainable practice. Only 3% to 8% of all farmers across the blocks reported that they would be able to maintain farming activities at the same level even if there is water scarcity in the future. The various ways of achieving the purpose as mentioned by them is shown in Table

1below. It is interesting that adoption of community control has been the least priority and it indicates lack of community effort and even perception about the same for overcoming water crisis. Further, all the proposed measures will require external support and additional resources.

Table 1: The reported methods to maintain the same level of farming in future

% HHs who reported	Chanditala- I (n=68)	Jangipara (n=66)
Use seeds of existing crop requiring less water	0.0	60.0
Cultivate crop requiring less water	0.0	60.0
Will adopt micro-irrigation	50.0	100.0
Improve agronomic practice requiring less water	100.0	80.0
Reduce cropping area	00.0	20.0
Community control on growing water intensive crop	00.0	20.0
Will store more water for farming	50.0	20.0

Source of data: based on primary field survey in Chanditala I and Jangipara blocks of West Bengal.

(a)Regulation of ground water: The West Bengal Ground Water Resources (Management, Control and Regulation) Act 2005 was introduced to regulate sinking any bore well using mechanical or electrical power. It may be mentioned that the system of regulation of groundwater use has become weak after an order was issued vide No. 189 - WRIDD/SECY dated 03/11/2011 under which exemption was provided in respects of pumps with capacity below 5 HP or with maximum discharge of 30 cubic meters/hour. It may be mentioned that submersible pump of 3 HP can abstract water from a depth of 600 feet. The weakening of the regulation has the potential of pushing the crisis of ground water substantially.

(b)Practice of climate resilience farming: Although the farmers reported various options on how they will cope in future if water scarcity persists, most of them (around 95.3%) reported that they did not know the water conserving techniques in agriculture to promote climate resilient farming. Only 8.6% farmers in Chanditala I block and 6.4% farmers in Jangipara were aware of water conservation techniques related to water. Farmers who stated they were aware of the water conserving techniques stated that they have cultivated around 3 acres of land on an average using such techniques. The coverage was found to be higher in Jangipara (around 5 acres), while in Chanditala I, it was around 2 acres on an average. Thus, only a small portion of farmers have started thinking on climate resilient agriculture and even less percentage of farmers are actually practicing water conservation techniques in agriculture and none of them mentioned of having required skill on the other methods on which they expressed their awareness. Farmers specifically mentioned that they need training on how to reduce the need for water in agriculture. So, this is high time to promote more water efficient farming and take up local interventions for augmentation of ground water availability and controlling its abstraction. The initiative has to come from the government and support of the GPs will be a critical need to mobilize the people.

(c) Barriers to adopt climate resilient farming: All the farmers who were aware about climate resilient farming faced lack of fund to adopt the same. It may be mentioned that farmers expressed during the discussion that farming has become unremunerated. Therefore, spending money to adopt climate resilient farming will not be a reality. The other major problem faced was the lack of manpower having required skill and lack of title on the land is the other problem reported by 14.3% farmers.

(d) Use of climate tolerant seeds: Only 57.4% farmers in Chanditala I, and 44.4% farmers in Jangipara reported that they used flood-tolerant seeds and around 55.9% farmers in Chanditala I, and 44.4% farmers in Jangipara reported using drought-tolerant seeds.

Therefore, use of more suitable seeds seems to be in practice to some extent but the gap is even higher.

(e) Risk perception of the farmers: The risk perception of the farmers was measured on a Likert scale by asking the question whether they thought that their livelihood will be at risk in future due to shortage of water. At an aggregate level, most of them (55%) agreed that their livelihoods may be at risk, followed by 42.4% who were sure that their livelihoods will be at risk, reflecting high risk perception of the farmers.

(f) Willingness to invest in agriculture: Interviews with the farmers revealed the unsustainability of agriculture as a livelihood, which makes them unwilling to invest in agriculture. Farmers from both the study blocks mentioned that agriculture has become a secondary source of income. They are reluctant to invest further on agricultural land, because they were already incurring heavy losses or their families could not survive out of the meagre produce that they got from cultivating these lands. The cost of water is also rising over the years due to increasing cost of electricity and also lowering of the groundwater table, as the water sellers had already reported. The quality of soil had also declined according to the farmers. According to them, the same plot of land now yields less quantity of paddy and they also had to apply more fertilizers.

From the qualitative interviews, it was revealed that the farmers practiced mostly rain fed agriculture and did not depend on irrigation water. Most of these farmers were smallholders or share croppers who could not afford to buy irrigation water at Rs 100 - 150 per hour. As such, their fate was highly uncertain and in cases of monsoon failures or extreme events the crop yield reduces drastically. Purchased water was mainly used for irrigation of Boro paddy during the winter months. It was also reported by them that the land under Boro cultivation was not increasing any more. Most of the land under cultivation were getting transformed to built-up area (settlements) due to growing population and urbanization.

(g) Other reasons: It was observed from the field investigation that several impacts of climate change on agriculture are visible. These are listed below with specific narratives derived from the field.

1. Longer period of droughts/ dryness/water scarcity;

2. Change in seasons, weather becoming abrupt and therefore the sowing and harvesting seasons were being affected;

3. Both the frequency and intensity of extreme events such a flood, droughts as well as cyclones have increased over the year;

4. Erratic nature of rainfall and heavy rains have damaged crops on many occasions and, therefore, farmers could not harvest most of the crops they have sown;

5. New species of pests have emerged which are damaging huge areas of crop. These pests cannot be controlled even after applying very costly pesticides. Farmers reported that these pests have emerged in the last 5-7 years and were never seen before.

Arrangement for distribution of water:

It was found that there was no community-level arrangement for distribution of the irrigation water received from the DVCA. Only 22.6% households in the entire study area reported that occasionally there was some community-level arrangement. The percentage stating the presence of community-level arrangement was found to be around 28.1 % in Chanditala I and 14.3% in Jangipara. Among those who reported about the presence of community-level arrangement of distribution of the DVCA water, everyone reported that the system was

working satisfactorily in their area. However, various problems regarding the same was reported by the farmers of Jangipara and Chanditala I. Many farmers reported that the community was not competent in arranging a distribution system and farmers at the upper end do not allow water to flow down. They also reported that the availability of water was uncertain.

Around two-third (66.3%) of the respondents agreed that the availability of DVCA water for irrigation has declined in the last five years. The percentage was found to be maximum (around 84.4%) in Chanditala I, followed by 65.8% in Jangipara. The households living within the command areas of the DVCA were also asked how they managed water for irrigation in case of non-availability of water from the DVCA and multiple responses were received. The most common coping strategy was withdrawing more underground water. That was followed by switching to other crop varieties which required less water or reduction in farm area. A significant percentage (30.0%) of the farmers reported that they could not cope and had to suffer losses. The blocks of Hooghly district, withdrawing more groundwater was the most common strategy (87.5% and 81.5% for Chanditala I and Jangipara blocks respectively). It may be mentioned that under the West Bengal Major Irrigation and Flood Management Programme (WBMIFMP) the irrigation infrastructures of the DVCA is being revamped and one of the objective is to reduce abstraction of ground water in the command area of the DVCA.

Recommendations Based on Field Level Observation:

Given the high trend of abstracting ground water to cope with the water shortage, particularly in Hooghly district, there is need for more improvement in distribution of available water as well as building awareness of the farmers of the dangers of high abstraction of ground water as well as practicing agriculture with more efficient use of water. That will require good coordination among Irrigation & Waterways Department, Water Resources Investigation & Development Department (WRIDD) and the Agriculture Department. In order that the Panchayats also join the effort there will be also need for involvement of the Panchayat & Rural Development Department (P&RDD).

1) The groundwater table is going down deeper and the sources of drinking water are drying up or the yield of the sources is declining in summer. The situation has worsened in last 5 years, which makes sustainability of water supply is under threat.
2) The community people, particularly the farmers, are willing to take local actions but had little knowhow as to what can be done and who can help. Even the GPs do not have adequate knowledge and technical skill how to cope with the worsening water availability for agricultural purposes.
3) The reliability of water supply services has been found to be affected more by climatic causes than the mechanical or electrical failures. Making the water supply infrastructure climate resilient has become a need.
4) Promotion of social forestry and improving green cover for reduction of carbon di-oxide, promotion of bio-fertilizer and management of solid and liquid waste to mitigate global warming. To make people aware of how more tree cover can help recharging of ground water and to participate in tree plantation in every possible place.
5) To provide training on roof top rain water harvesting, which should be made a mandatory practice in areas which are urbanizing faster. Those GPs may be notified and people need to be encouraged to put such arrangement in place.
6) To promote grey water management and reusing the water for irrigation and ground water recharging.

7) Build capacity of the GP to be able to prepare and implement water security plan and ensure participation of the people in its preparation and implementation. Plan for water resource management should be a priority under the Gram Panchayat Development Plan (GPDP).
8) Farmers to be trained on water efficient farming and adopt climate-resistant practices. Crops requiring less water but having returns similar to the existing crops need to be introduced. That will include making appropriate seeds available locally at affordable cost and to promote bio-fertilizers for reducing the cost of farming.
9) There should be better communication between DVCA and the farmers directly or through the GPs for giving prior intimation of irrigation water and release of water during excess rain as early as possible.
10) There is also need for developing community level institution like farmers clubs/ water user association etc. for distribution and management of water available from DVCA and that can be safely exploited from the underground.
11) There is need for coordinated efforts of I&WD, WRIDD, Agriculture Department, PHED and the P&RDD for promotion of integrated water management and climate resilient farming. There is also need for sensitization of the block and district level officials of those department.
12) There may be specific funding for making the community climate resilient with a guideline on what activities can be taken up and how. GPs to be encouraged to have convergence by using various programme funds like MGNREGS and entitled funds like Finance Commission grants for local interventions towards climate resilient. P&RDD should issue specific Government Order in this regard.

Application of Soil Moisture Meter – A robust tool for judicious use of irrigation:

Based on various project experience, the use of soil moisture meter has been identified as a low cost, robust, long-lasting tool easily used by any farmers without any additional cost. More irrigation not necessarily helps increase in production but reduces production. Better understanding of when to irrigate and when to stop irrigating the fields was demonstrated by the project using soil moisture meter. It has helped in creating awareness in the farmers for judicious use of water. It saves cost of irrigation, electricity & fertilizer which was earlier getting drained with excess irrigation water. Saving of these may actually be utilized for additional cropping fields. Observed 18% reduction in electricity charges and 13% increase in production in mustard fields.

Further, the community and the farmers in the study blocks should adopt an inclusive and people led approach and followed the principle of 'do not harm' along with adoption of best technology based on traditional knowledge and scientific validation (IISD, 2020). In this context, smart practices including use of weather information for farming, climate resilient water management, reduction of carbon emission, less dependence of chemical fertilizer-based nitrogen, more use of renewable energy and knowledge dissemination at the village level have to be introduced to enhance community's and farmers ability to adapt to climate change, manage risks and reduce emissions for resilience building using pre-tested and context specific approach.

Conclusion:

The West Bengal Major Irrigation & Flood Management Project (WBMIFMP) on improving the irrigation water supply services in the command area of the Damodar Valley Corporation Authority (DVCA) in a climate resilient manner is under implementation by the Irrigation & Waterways Department (IWD) of the state with support from the World Bank and the Asian Infrastructure Investment Bank (AIIB). There is need for a parallel intervention at the

community level and agricultural fields to make them aware of the various aspects of the projects and how they can manage the water better in an integrated manner. They are also to be made aware of the climate change, likely increase in intensity and duration of water stress due to climate change, the adaptation measures at community and individual level to cope with the problems to have synergy with the stakeholders. There will be also need for better preparedness to reduce the risk of damages of life, property, infrastructures and livelihood due to climate induced disasters such as flood, drought and frequent cyclone.

Reference:

- Bhattacharjee, B. K. (1982). Rainfall-recharge correlation; a method for evaluating potential groundwater. Improvements of Methods of Long-Term Prediction of Variations in Groundwater Resources and Regimes Due to Human Activity (pp. 161-167). IAHS.
- Bandyopadhyay. (2007). Evolution of the Ganga Brahmaputra Delta: A Review. Geographical Review of India, 69 (3), 235-268. https://www.researchgate.net/publication/285109266_Evolution_of_the_Ganga-Brahmaputra_delta_A_review.
- FAO. (2020). The State of Food and Agriculture: Overcoming Water Challenges in Agriculture. ISSN 0081-4539 [PRINT] E-ISSN 1564-3352 [ONLINE] ISBN 978-92-5-133441-6.
- Govt. of India. (2015). Toolkit for the preparation of a drinking water security plan. Erstwhile Ministry of drinking water and sanitation.
- Govt. of India. (2001). National Bureau of Soil Survey and Land Use Planning.
- Global Water Partnership and UNICEF. (2014). WASH Climate Resilient Development-Strategic Plan.
- IISD. (2020). Generation 2030: Climate Smart Villages: Learning to Adopt to Climate Change Contextually.
- IPC. (2013). Climate Change-The Physical Science Basis. Fifth Assessment Report of the IPC on Climate Change.
- Lal. R., (2009). Soil degradation as a reason for inadequate human nutrition. *Food Security* 1, (2009): 48. https://doi.org/10.1007/s12571-009-0009-z.
- Lendrum. D.C., and Woodruff. R., (2007). Comparative risk assessment of the burden of disease from climate change. National Library of Medicine. PMID: 17185288 PMCID: PMC1764135. DOI: 10.1289/ehp.8432.
- Ramankutty. N, Jonathan A. Foley, and Nicholas J. Olejniczak. People on the Land: Changes in Global Population and Croplands during the 20th Century. *AMBIO: A Journal of the Human Environment* 31(3), 251-257, (1 May 2002). https://doi.org/10.1579/0044-7447-31.3.251).
- Stern. N., (2007). The Economics of Climate Change: The Stern Review. https://www.lse.ac.uk/granthaminstitute/publication/the-economics-of-climate-change-the-stern-review/
- Zhang. X, Zhang. L, Chansheng. H, Jinlin. Li, Jiang. Y, and Libang. M. Quantifying the impacts of land use/land cover change on groundwater depletion in North-western China–A case study of the Dunhuang oasis. 2014. Agricultural Water Management. Volume 146.

*****

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में पुस्तकालय विज्ञान का महत्व

– मदन पाल (शोधार्थी)
पुस्तकालय एवं सूचना विभाग
स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

– डॉ. (प्रो.) सुधीर त्यागी
विभागाध्यक्ष
पुस्तकालय एवं सूचना विभाग
स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

सारांश –

पुस्तकालय विज्ञान एक अंतःविषय क्षेत्र है जो पुस्तकालय प्रशासन के सिद्धांतों और प्रथाओं को जोड़ता है। पुस्तकालय विज्ञान से जुड़े विषय शिक्षा, प्रबंधन और सूचना प्रौद्योगिकी हैं। किसी भी पुस्तकालय का मुख्य उद्देश्य सूचना संसाधनों को संचय करना, व्यवस्थित करना, संरक्षित करना और प्रसारित करना है।

पुस्तकालय विज्ञान की भूमिका अनुसंधान और शिक्षण की संयुक्त सेवा प्रदान करना है। यह पेशेवरों के ज्ञान आधार में योगदान देता है और उन्हें उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए तैयार करने में मदद करता है। पुस्तकालय विज्ञान एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें पिछले 20 वर्षों में जबरदस्त बदलाव आया है जो इसे किसी भी अन्य पेशे की तुलना में अधिक चुनौतीपूर्ण बनाता है। पुस्तकालय विज्ञान पाठ्यक्रम पुस्तकालयों को डिजाइन करने और बेहतर बनाने में मदद करेगा।

डिजिटल युग में लाइब्रेरियन और लाइब्रेरी साइंस का महत्व बढ़ता जा रहा है। पुस्तकालय पेशेवर वे हैं जो पेशेवरों और संगठनों को सूचना सेवाएँ प्रदान करने में पूरी तरह से शामिल हैं। आधुनिक डिजिटल युग में, गुणवत्तापूर्ण और फ़िल्टर की गई जानकारी की आवश्यकता बढ़ गई है और इसलिए पुस्तकालयाध्यक्षों की प्रमुख भूमिका है। इससे इस डिजिटल युग में पुस्तकालय विज्ञान का दायरा बढ़ गया है। पुस्तकालय पेशेवरों के बीच कंप्यूटर साक्षरता और अधिक अनुकूल सिस्टम इंटरफ़ेस के परिणामस्वरूप उनके लिए अभूतपूर्व अवसर पैदा हुए हैं। ये अवसर शिक्षा में पुस्तकालय विज्ञान के महत्व को उजागर करते हैं।

मुख्य भाब्द : पुस्तकालय विज्ञान, कंप्यूटर, अनुसंधान, आधुनिक, डिजिटल।

परिचय –

पुस्तकालय बहुत से लोगों को मुफ्त शिक्षा और मनोरंजन प्रदान करते हैं, चाहे वह छात्र हो, कामकाजी पेशेवर हो या किसी समुदाय का आम व्यक्ति हो। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आपकी आर्थिक स्थिति क्या है, आप उपलब्ध रह सकेंगे और उन पुस्तकों तक निःशुल्क पहुंच प्राप्त कर सकेंगे जो आपको सूचित कर सकती हैं और आपके लिए काम कर सकती हैं। हालाँकि स्कूल/कॉलेज और विश्लेषण पुस्तकालयों का उपयोग केवल उसी स्कूल/कॉलेज के छात्रों तक ही सीमित है, लेकिन राज्य और सामुदायिक पुस्तकालय सभी के लिए खुले हैं और कोई भी संचालन अवधि के दौरान इनका लाभ उठा सकता है। यह कहना गलत नहीं होगा कि पुस्तकालय एक ही छत के नीचे हर प्रकार की और सभी विषयों की पुस्तकों का भंडार गृह होता है। एक सभ्य आधुनिक पुस्तकालय आमतौर पर सभी आवश्यक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं की सदस्यता लेता है ताकि ये इन डेटा स्रोतों में रुचि रखने वाले किसी भी या सभी लोगों के लिए उपलब्ध हो सकें। आजकल पुस्तकालय अपने कार्य क्षेत्र को आगे बढ़ा रहे हैं। यह अब भौतिक पदार्थ तक ही सीमित नहीं है। जब भी या जहाँ भी आप ऑनलाइन मोड के माध्यम से इंटरनेट का उपयोग करना चाहें, यह 21वीं सदी की तकनीक का उपयोग करके सूचना आवश्यकताओं से संबंधित सभी सुविधाएं दे सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य –

- आधुनिक युग में पुस्तकालय विज्ञान की भूमिका का पता लगाना।

अध्ययन की पद्धति एवं सीमा

पुस्तकालय हमारे समाज में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यह अध्ययन वेबसाइटों, ब्लॉगों और कुछ प्रसिद्ध पत्रिकाओं से जानकारी एकत्र और एकत्रित करके किया जाता है। साथ ही हमारे समाज में पुस्तकालयों के प्रभाव के संबंध में कुछ व्यावहारिक अनुभव और अवलोकन भी इस पेपर में लागू किए गए हैं।

प्रस्तुत पेपर की शब्द सीमा के कारण सभी व्यापक जानकारी प्रदान करना संभव नहीं है। हालाँकि इस पेपर में हमारे समाजों में पुस्तकालयों के सबसे प्रासंगिक और महत्वपूर्ण पहलुओं पर चर्चा की गई थी।

समाज एवं आधुनिक समाज की परिभाषा–

एक समाज, या एक व्यक्ति का समाज, व्यक्तियों का एक समूह हो सकता है जो लगातार संबंधों के माध्यम से एक–दूसरे से जुड़े होते हैं, या एक समान भौगोलिक या सामाजिक क्षेत्र को साझा करने वाला एक बड़ा सामाजिक समूह हो सकता है, जो आमतौर पर एक समान राजनीतिक प्राधिकरण और प्रमुख सांस्कृतिक अपेक्षाओं के अधीन होता है।

आधुनिक समाज भौतिक प्रचुरता के रूप में प्रगति लाता है। कम निश्चित रूप से, यह प्राकृतिक और सामाजिक सेटिंग के बढ़ते प्रबंधन को लाता है। हालाँकि इसकी वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियाँ धार्मिक और भावनात्मक जीवन के लिए कुछ मूल्य रखती हैं।

आधुनिकतावाद और आधुनिकीकरण के प्रवचन के खंडों को वर्गीकृत करने के अलावा, हाल के समाज के आवश्यक विकल्पों की एक संरचना छिपी हुई है जिसमें

1) सामाजिक विकास की कैथोलिकता (अपरिवर्तनीयता) शामिल है;
2) सभ्यतागत परिवर्तनशीलता और सांस्कृतिक कार्यक्रमों का वैयक्तिकरण;
3) रिलीज प्रवृत्ति और एंटीनोमीज़;
4) संशोधन और नवाचारों की स्थायित्व;
5) उत्पादकता, संघर्ष और जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि।

''पारंपरिक'' उन समाजों या समाजों के हिस्सों को संदर्भित करता है जो छोटे पैमाने के होते हैं और स्थानिक और कभी–कभी प्राचीन सांस्कृतिक प्रथाओं से उत्पन्न होते हैं। ष्आधुनिकष् उन प्रथाओं को संदर्भित करता है जो उत्पादन के वाणिज्यिक तरीके या बड़े पैमाने पर औपनिवेशिक समाजों की घटना से संबंधित हैं।

पुस्तकालय अभी भी महत्वपूर्ण हैं

सामान्य सार्वजनिक पुस्तकालय का प्राथमिक उद्देश्य शिक्षा, डेटा और निजी विकास के साथ–साथ मनोरंजन और अवकाश के लिए लोगों और टीमों की जरूरतों को पूरा करने के लिए एक प्रकार के मीडिया के माध्यम से संसाधनों और सेवाओं की आपूर्ति करना है। वे व्यक्ति को अच्छे और विविध प्रकार के डेटा, विचारों और विचारों तक पहुंच प्रदान करके लोकतांत्रिक समाज के विकास और रखरखाव में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पुस्तकालय एक स्वस्थ समुदाय की आवश्यक आधारशिला हैं।

पुस्तकालय लोगों को नौकरी खोजने, चिकित्सा अनुसंधान का पता लगाने, नए विचारों का अनुभव करने और शानदार कहानियों में खो जाने का अवसर प्रदान करते हैं, जबकि लगातार समय पर एकत्रित होने के लिए जगह प्रदान करते हैं। पुस्तकालय विविधता और चरित्र के साथ–साथ हमारे समुदाय की इच्छाओं और अपेक्षाओं को भी दर्शाता है।

वे इच्छाएँ और अपेक्षाएँ आम तौर पर गहन होती हैं, और सेवाएँ भी मूल्यवान होती हैं। लाइब्रेरी आम तौर पर व्यक्तिगत, पारिवारिक और नौकरी से संबंधित कार्यों के लिए व्यक्तियों द्वारा आवश्यक व्यापक डेटा की आपूर्ति करने वाली एकमात्र त्वरित पेशकश है।

हमारे समुदाय के आर्थिक लाभ तब होते हैं जब व्यवसायी व्यक्ति पुस्तकालय संसाधनों का उपयोग बुद्धिमान व्यावसायिक विकल्प बनाने के लिए करते हैं, श्रमिक इसका उपयोग नौकरी कौशल को बढ़ावा देने के लिए करते हैं, या वंचित लोग इसका उपयोग गरीबी के चक्र को तोड़ने में सहायता के लिए

करते हैं। आर्थिक कठिनाई के दौरान, हमारे नागरिक परस्पर संचार करते हैं और पुस्तकालय पर निर्भर रहते हैं।

गर्मियों की छुट्टियों, शामों और सप्ताहांतों में, लाइब्रेरी हाई स्कूल के बच्चों को दी जाने वाली एकमात्र लाइब्रेरी है; प्रीस्कूलरों के लिए यह केवल एकमात्र पुस्तकालय है।

संकाय के छात्र आमतौर पर सप्ताहांत या छुट्टियों के लिए घर पर रहने के बाद पुस्तकालय का उपयोग करते हैं। और सार्वजनिक पुस्तकालयों के संदर्भ संसाधन भी आमतौर पर समुदाय के भीतर कहीं और पहुंच योग्य नहीं होते हैं।

पुस्तकालय एक विशिष्ट और मूल्यवान संसाधन हो सकता है। यह विश्व के लिए एक जीवन रेखा है और हर किसी को इसमें ज्ञान है।

आधुनिक युग में पुस्तकालयों की भूमिका–

आधुनिक समाज सूचना–आधारित और ज्ञान–आधारित समाजों की ओर बढ़ रहे हैं। ऐसे समाजों में सूचना और ज्ञान सबसे अधिक मांग वाला और मूल्यवान उत्पाद है। ट्रेंडी समाज आर्थिक नेताओं के रूप में उभरने के लिए अपने मिशन का समर्थन करने के लिए इस मूल्यवान माल – डेटा और सूचना – को चाहेंगे। शिक्षा और सीखने की स्थापना, नीति और उच्च संज्ञानात्मक प्रक्रिया निकाय, तकनीकी नवाचारों, अनुसंधान, शिक्षा, सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रगति और विकास के लिए व्यापार उपयोग डेटा, पुस्तकालय समाज और राष्ट्र को प्रदान की जाने वाली जानकारी के निर्माण के सबसे प्रभावी साधनों में से एक हैं।

पुस्तकालय सामाजिक ढाँचे का एक हिस्सा बन गये। पुस्तकालय ग्रामीण विकास के सभी सामाजिक कार्यक्रमों का एक अभिन्न अंग बन गए। आधुनिक समाजों का समर्थन करने में पुस्तकालय जो भूमिकाएँ निभाते हैं उन्हें अक्सर 5 प्रमुख वर्गों के अंतर्गत क्रमबद्ध किया जाता है (प) शिक्षाशास्त्र भूमिकाएँ (पप) उपयोगकर्ता शिक्षा भूमिकाएँ, (पपप) मनोरंजन भूमिकाएँ, (पअ) एक क्षेत्र के रूप में पुस्तकालय और (अ) सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिकाएँ। पुस्तकालयों ने जो सामाजिक भूमिकाएँ निभाई हैं उनमें सूचना और ज्ञान का लोकतंत्रीकरण, व्यक्तियों को सूचना और डेटा स्रोतों से जोड़ना, प्राधिकरण के लिए समुदायों को डेटा और जागरूकता सेवाएं शामिल हैं। एक क्षेत्र के रूप में पुस्तकालय अपने आप में एक संबद्ध आकर्षण है क्योंकि पुस्तकालय का उपयोग शैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों को चलाने और व्यवस्थित करने के लिए किया जाता है। पुस्तकालय सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए सांस्कृतिक गतिविधियों के आयोजन जैसी विभिन्न गतिविधियों के लिए उपयुक्त आविष्कारशील क्षेत्रों के साथ सामुदायिक केंद्रों के रूप में कार्य करते हैं। पुस्तकालय भविष्य की पीढ़ियों के लिए समाज के सामाजिक–सांस्कृतिक पहलुओं से संबंधित दस्तावेज़ एकत्र करते हैं, संरक्षित करते हैं।

जब प्रत्येक व्यक्ति के पास अपनी जेब में डिवाइस पर एक वैश्विक पुस्तकालय रखने की क्षमता होती है, तो भौतिक पुस्तकालयों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो सकती है, न कि केवल संसाधनों को रखने का स्थान, बल्कि उनसे अर्थ पैदा करने का स्थान भी। 21वीं सदी के पुस्तकालय एक स्वागत योग्य साझा स्थान प्रदान करते हैं जो छात्रों, शिक्षकों और एक व्यापक समुदाय के बीच अन्वेषण, निर्माण और सहयोग को प्रोत्साहित करता है।

अधिक पुस्तकालय स्थापित करने और उपयोगकर्ताओं को अधिक उन्नत सेवाएँ देने की आवश्यकता है जो सफल समाज बनाने में मदद करेंगे। सरकार पुस्तकालयों के विकास की दिशा में आवश्यक कदम उठाती है जो हमारे समाज के साथ–साथ हमारे राष्ट्र को भी विकसित करने में मदद करेगी। पुस्तकालय पेशेवरों को पुस्तकालय विपणन, पुस्तकालय अभिविन्यास कार्यक्रम, पुस्तकालय विस्तार सेवा जैसे विभिन्न तरीकों को लागू करके उपयोगकर्ताओं को पुस्तकालय की ओर आकर्षित करने के लिए अपने ज्ञान को उन्नत करने और अधिक ऊर्जावान होने की आवश्यकता है। पुस्तकालय पेशेवरों को हमारे पुस्तकालय में 21वीं सदी के तकनीकी आशीर्वाद की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी लेनी होगी जो उपयोगकर्ताओं को पहली और अद्यतन पुस्तकालय सेवाएं प्रदान करने में मदद करेगी।

निष्कर्ष–

पुस्तकालय दुनिया के उन कुछ स्थानों में से एक हैं जो सबसे खराब व्यक्तियों को भी खुद को बेहतर बनाने का अवसर प्रदान करते हैं। ऐसी बहुत सारी गतिविधियाँ हैं जो आप वहाँ करेंगे। व्यक्ति अवसाद, शराब की लत, व्यक्तिगत वित्त, रोजगार पर ध्यान देने का तरीका, अपने घर को ठीक करने का अध्ययन करेंगे। यह आसान नहीं है, और आपको अपना सब कुछ लगाने की आवश्यकता बनी रहेगी। आपको अंग्रेजी समझनी होगी और इसमें आपको कई घंटे बिताने होंगे। आप अपने लिए रोजगार खोजने के लिए विभिन्न समाचार पत्रों और रोजगार समाचारों का उपयोग कर सकते हैं, पढ़ने के लिए विभिन्न पुस्तकें और पुस्तकालय में सभी के लिए बहुत कुछ मौजूद है। पुस्तकालय प्रत्येक समूह में से प्रत्येक के लिए एक दरवाजा प्रदान करता है। पुस्तकालय बहुत से लोगों को निःशुल्क शिक्षा और मनोरंजन प्रदान करते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आपकी आर्थिक स्थिति क्या है, आप उपलब्ध रह सकेंगे और उन पुस्तकों तक निःशुल्क पहुंच प्राप्त कर सकेंगे जो आपको सूचित करेंगी और आपके काम में सुधार करेंगी। मुझे आशा है कि पुस्तकालय किसी न किसी रूप में लगातार मौजूद रह सकते हैं।

संदर्भ–

1. आसु, एम. (2007) ''किसी समुदाय को बढ़ाने के लिए एक पुस्तकालय की आवश्यकता होती है'' ओंटारियो लाइब्रेरी एसोसिएशन सुपर कॉन्फ्रेंस, 31 जनवरी – 3 फरवरी, 2007। टोरंटो, ओंटारियो।
2. ब्रॉड, जी. (2005). आपके पुस्तकालय में बोर्ड और सामुदायिक क्षमता निर्माण। ओंटारियो लाइब्रेरी सेवा–उत्तर वार्षिक सम्मेलन, 26 मई 2005। ओंटारियो।
5. कल्याणी, वी., और मुरुगन, के. ''महिला सशक्तिकरण पर सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका : कराईकुडी शिवगंगा जिले में सार्वजनिक पुस्तकालय का एक अध्ययन विशेष संदर्भ'' आईएसबीएनः9789385469053।
4. https:@@www-wipo-int@wipo&magazine@en@2012@04@article&0004-html
5. http:@@www-ilovelibraries-org@what&libraries&doIFLAPublicLibraryServiceGuidelines

वाल्मीकि रामायण में अलंकार–प्रयोग

–डॉ. मोहन लाल मेघवाल
सह आचार्य, संस्कृत विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
प्रतापगढ़, राजस्थान–312605

भारतीय वाङ्मय–परम्परा में काव्य का स्थान भी शास्त्र के समतुल्य ही महत्वपूर्ण माना गया है। सूक्ति व सुभाषित भी काव्य की प्राचीन संज्ञाएँ हैं। सूक्ति के नाम पर ही काव्यशास्त्र के लिए 'सूक्तिमार्ग' संज्ञा का प्रयोग हुआ है। चतुर्थ शताब्दी में गुप्त–सम्राट् समुद्रगुप्त के अभिलेख में उनके सूक्तिमार्ग नैपुण्य की प्रशंसा की गयी है–

अध्येयः में सूक्तिमार्गः कवित–मति–विभवोत्सारणं चापि काव्यम्।[1]

कालान्तर में सूक्ति के स्थान पर अलंकार संज्ञा का प्रयोग काव्य–रचना के क्षेत्र में हुआ तथा अलंकार–चिन्तन का अर्थ काव्यशास्त्र से लिया जाने लगा। अलंकार शस्त्र की संज्ञा काव्यशास्त्र का पर्याय बन गयी। जो व्यक्ति काव्य तथा काव्य–रचना के विवेचन में तत्पर हुए हैं, उनको भारतीय परम्परा में आलंकारिक की संज्ञा दी गयी है। काव्य–रचना के क्षेत्र में पहिली शती से दसवीं शती तक जो विवेचन किया गया, उसे अलंकार की सीमा में ही समाविष्ट माना जाता है।

अलंकार शब्द काव्यशास्त्र में कितनी महत्वपूर्ण संज्ञा है, यह इससे ही जाना जा सकता है कि अकेले यह एक शब्द अपने में भारतीय काव्यशास्त्र का सम्पूर्ण इतिहास समेटे है। पण्डित प्रवर आचार्य वामन ने अपने ग्रन्थ 'काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति' के प्रारम्भ में ही कहा है कि काव्य अलंकार के योग से ही उपादेय होता है–

काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्।[2]

काव्यशास्त्र की गहरी नींव अलंकार के स्वरूप–विवेचन में ही दी गयी है। यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि काव्यविदों को अलंकार संज्ञा उतनी प्रिय हुई, जितनी प्रियता उन्हें काव्य–चिन्तन में सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्राप्त ध्वनि और रस की भी स्वीकार नहीं है। ध्वनि को भी प्रसिद्ध अलंकार विशेष के रूप में स्वीकार करने के लिए काव्य–तत्वज्ञों का एक सम्प्रदाय ध्वन्यालोककार आचार्य आनन्दवर्धन के समक्ष था।[3] यदि हम काव्य के प्रयोग–पक्ष का ध्यान रखें, तो अलंकार और ध्वनि की निश्चित विभाजक रेखा भी प्रस्तुत नहीं की जा सकती केवल इतना कहा जा सकता है कि यह वाच्य अर्थ है अतः अलंकार है एवं यह आक्षिप्त अर्थ है, अतः ध्वनि है, अथवा सहृदयों की अनुभूति ही इनमें प्रमाण है। सूक्ष्मतया विवेचना करने से सिद्ध होता है, अलंकार व ध्वनि दोनों की मूल प्रेरणा भाव ही है, अतः दोनों में उल्लेखनीय साम्य है।

रामायण में अलंकार –

प्रत्येक साहित्य में प्रतिभाशाली कवियों की लेखनी से प्रसूति कतिपय ऐसे मर्मस्पर्शी काव्य हुआ करते हैं, जिनसे स्फूर्ति व प्रेरणा लेकर अवान्तरकालीन कविगण अपने काव्यों को सजाया करते हैं। ऐसे काव्यों को हम व्यापक–प्रभाव सम्पन्न होने के कारण 'उपजीव्य काव्य' के नाम से अभिहित करते हैं। संस्कृत–साहित्य में भी ऐसे उपजीव्य काव्य विद्यमान हैं, जिनमें संस्कृत भाषा तथा अन्य भाषाओं के कवियों ने अपने विषय के निर्देश तथा काव्यशैली के विमल विधान के निमित सतत उत्साह तथा अश्रान्त तथा अश्रान्त स्फूर्ति ग्रहण की है। इन उपजीव्य काव्यों में से वाल्मीकि रामायण का स्थान अतिविशिष्ट है। इसे आदिकाव्य कहा जाता है। कालक्रमानुसार संस्कृत–साहित्य के विकास में आदिम होने पर भी महर्षि वाल्मीकि की पीयूषमयी वाणी में सौन्दर्य–सृष्टि का चरमोत्कर्ष है तथा प्रशस्त काव्य–कला की उदात्तता है। काव्य तथा नाटकों को विषय–निर्देश देने में रामायण सदैव एक अक्षुण्ण स्रोत रहा है। काव्यशास्त्र के लक्षणग्रन्थों ने भी इस आदिकाव्य का अवलम्बन कर अपने लक्षण सुनिश्चित किये हैं।

आचार्य आनन्दवर्धन ने रामायण को 'सिद्धरस प्रबन्ध' कहा है–

सन्ति विद्धारसु ये च रामायणादयः।
कथाश्रया न तैर्योत्या स्वेच्छा रसविरोधिनी।।[4]

आचार्य अभिनवगुप्त की व्याख्या से 'सिद्धरस' पद का अर्थ स्पष्ट हो जाता है– 'सिद्ध आस्वादमात्रशेषः, न तु भावनीयो रसो यस्मिन अर्थात् जिस प्रबन्ध में रस की भावना नहीं करनी पड़ती, अपितु रस आस्वाद के रूप में ही परिणत हो गया रहता है, वह काव्य सिद्धरस काव्य कहलाता है।

रामायण का कलापक्ष व अलंकारिता।।

रामायण में प्रायः हृदयपक्ष की प्रधानता मानी गयी है, तथापित यह नहीं कहा जा सकता कि इसका कलापक्ष कथमपि उपेक्षित है। आदिकवि वाल्मीकि की भाषा उदात एवं सौम्य भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। छोटे–छोटे व प्रायः समासविहीन पदों में महर्षि ने बड़े ही सरल एवं सरस शब्दों द्वारा अपने भावों की मधुर अभिव्यन्जना की है।

अलंकार– प्रयोग में शब्दी सुषमा की ओर आदिकवि का ध्यान स्वतः आकृष्ट हुआ है। माना जाता है कि अलंकृत उक्ति की प्रथम उद्भावना वाल्मीकीय रामायण में हुई है। रामायण में अनुप्रास एवं यमक अलंकारों के माध्यम से शब्दचित्र का शोभन विन्यास स्पृहणीय है। रामायण की आनुप्रासिक शोभा सुन्दकाण्ड के पन्चम सर्ग में स्पष्टतया दृष्टिगोचर होती है–

(क) अनुप्रास अलंकार– अनुप्रास अलंकार प्रमुख शब्दालंकार माना जाता है। आचार्य विश्वनाथ ने सात्यिदर्पण में अनुप्रास अलंकार का लक्षण इस प्रकार दिया है–

अनुप्रास शब्दसाम्यं वैशम्येअपि स्वरस्य यत्।[5]

वाल्मीकि रामायण के अनुसार अलंकार के निम्नलिखित उदाहरण उद्धृत किये जा सकते हैं–

ततः स मध्यग्ड़तमंशुमन्तं ज्योत्स्नावितानं मुहृद्वमन्तम्।
ददर्श श्रीमान्भुवि भानुमन्तं गोष्ठे वृशं मत्तमिव भ्रमन्तम्।।[6]

प्रस्तुत श्लोक के चारों चरणों के अन्त में वर्णसाम्य के कारण अन्त्यानुप्रास अलंकार हैं। यहाँ ताराओं के बीच भ्रमणशील चन्द्रमा की उपमा गोशाला में गायों के बीच मस्त होकर विचरणशील वृषभ से दी गयी है, अतः उपमा अलंकार भी है।

या भाति लक्ष्मीर्भुवि मन्दरस्था तथा प्रदोशेषु च सागरस्था।
तथैव तोयेषु च पुश्करस्था रराज सा चारूनिशाकरस्था।।[7]

प्रस्तुत श्लोक में भी अन्त्यानुप्रास अलंकार स्फुट है। वाल्मीकीय रामायण की तिलक टीका में टीकाकार राजा रामवर्मा ने इस श्लोक में 'निदर्शना' अलंकार बताया है, जिसका लक्षण साहित्यदर्पणकार के अनुसार निम्नलिखित है–

संभवन्वदतुसंबन्धोअसंभवन्वापि कुत्रचित्।
यत्र विम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत् सा निदर्शना।।[8]

अर्थात् जहाँ वस्तुओं का परस्पर सम्बन्ध सम्भव (अबाधित) एवं असम्भव (बाधित) होकर उनके बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव का बोधन करे, वहाँ निदर्शना अलंकार होता है।

प्रस्तुत श्लोक में भी जल में कमल की शोभा का जो वर्णन किया गया है, वह तो सहृदयों के लिए द्रष्टव्य है, परन्तु मन्दराचल और समुद्र की तादृशी शोभा तो महायोगियों व महात्माओं के लिए ही प्रत्यक्षगम्य है। अतः यहाँ बाधित एवं अबाधित के परस्पर बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव का बोधन होने से निदर्शन अलंकार है। रामायण की गोविन्दराजीय अथवा भाषा टीका में इस श्लोक में पर्याय अलंकार बताया गया है। पर्यायोक्त अलंकार का लक्षण निम्नलिखित है–

पर्यायोक्तं यदा भङ्ग्या गम्यमेवाभिधीयते।[9]

अर्थात्, जहाँ दूसरे रूप में, व्यंग्य बात को ही अभिधा से कह दिया जाय, वहाँ पर्यायोक्त अलंकार होता है।

स्थितः ककुद्यानिव तीक्ष्णश्रृंगो महाचलः श्वेतः दृर्वोर्ध्वश्रृंगः।
हस्तीव जाम्बूनदबद्धश्रृंगो विभाति चन्द्र परिपूर्णश्रृगः।।[10]

प्रस्तुत श्लोक में चारों चरणों में शब्दसाम्य के कारण अन्त्यानुप्रास है। यहाँ आकाश में उदित अकलङ्क्युक्त परिपूर्ण चन्द्रमा की उपमा तीखे सींग वाले खड़े बैल, ऊपर उठे हुए शिखर वाले हिमालय एवं स्वर्णजटित दाँतो वाले हाथी से दी गयी है, अतः यहाँ उपमा अलंकार भी है।

महागजैश्चापि तथा नदद्भिः सुपूजितैश्चज्ञपि तथा सुसद्भिः।
रराज वीरैश्च विनिःश्वसद्भिर्ह्रदा भुजङ्गैरिव निःश्वसद्भिः।।[11]

प्रस्तुत श्लोक में अन्तिम पदों में वर्णासाम्य के कारण अनुप्रास अलंकार है। यहाँ गर्व से साँस लेते हुए वीरों से भरी लंका की उपमा फुफकारते हुए सर्पों से भरे सरोवर से दी गयी है, अतः उपमा अलंकार भी है।

उष्णार्दितां सानुसृतास्त्रकण्ठीं पुरा वरार्होत्तमनिष्ककण्ठीम्।
सुजातपक्ष्मामभिरक्तकण्ठीं वने प्रवृत्तमिव नीलकण्ठीम्।।[12]

उपर्युक्त श्लोक में चारों के अन्त में शब्दसाम्य होने का कारण अन्त्यानुप्रास अलंकार है। यहाँ सीता जी की तुलना वन में प्रवृत्ता मयूरी से की गयी है, अतः उपमा अलंकार की भी उत्कृष्ठ सप्रसंग योजना है।

(ख) यमक अलंकार– साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने यमक अलंकार का लक्षण इस प्रकार दिया है–

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यन्जनसंहते।
क्रमेण तेनैवाडडवृत्तिर्यमकं विनिगृते।।[13]

अर्थात्, भिन्न अर्थ वाले स्वर–व्यन्जन समुदाय की उसी क्रम में आवृत्ति को यमक अलंकार कहते हैं। आदिकवि ने रामायण में यमक अलंकार का बड़ा ही रमणीय प्रयोग किया है, कतिपय उदाहरण निम्नलिखित है–

सीतामपश्यन्मनुजेश्वरस्य रामस्य पत्नीं वदतां वरस्य।
वभूव दुःखोपहतच्श्रिरस्य प्लवग्ङमो मन्द इवाचिरस्य।।[14]

रामायण की तिलक टीका के अनुसार पृथक्–पृथक् अर्थ वाले वरस्य एवं चिरस्य की आवृत्ति होने से इस श्लोक में यमक अलंकार है तथा चारों चरणों में वर्णसाम्य होने के कारण अन्त्यानुप्रास भी है।

स्थितः ककुद्यानिव तीक्ष्णश्रृंगो महाचलःश्वेतः इवोर्ध्वश्रृंगः।
हस्तीव जाम्बूनदबद्धश्रृंगो विभाति चन्द्रः परिपूर्णश्रृंगाः।।[15]

प्रस्तुत श्लोक के प्रत्येक चरण के अन्त में प्रयुक्त श्रृंग शब्द के भिन्न–भिन्न अर्थ है। प्रथमचरणगंत श्रृंग का अर्थ सौंग, द्वितीय चरणगत, श्रृंग का अर्थ शिखर तृतीय पादगत श्रृंग का अर्थ दॉत और चतुर्थ पादगत श्रंग का अर्थ कलंक है। इस प्रकार यहाँ यमक अलंकार है।

इस प्रकार शब्दालंकारों विशेषतः अनुप्रास अलंकार का सौन्दर्य महाकवि वाल्मीकि के आदिमहाकाव्य रामायण में अत्यधिक विशिष्टता से प्रकट हुआ है।

अर्थालंकार –

अर्थालंकारों का प्रयोग भी महर्षि वाल्मीकि ने अत्यधिक कुशलता एवं सजगता से किया है। सभी प्राचीन अर्थालंकार यथा– स्वभावोक्ति, रूपक, उपमा, दीपक एवं उत्प्रेक्षा का दर्शन रामायण में होता है। सम्भवतः इसके सभी अध्यायों को भी इसी कारण से काण्ड कहा जाता है क्योंकि इसके प्रायः सभी

श्लोक अलंकार–रसादि से युक्त हैं। रामायण में अर्थालंकारों की नैसर्गिक योजना से अलंकृत कतिपय श्लोकों के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(क) स्वभावोक्ति अलंकार– आचार्य विश्वनाथ ने स्वभावोक्ति अलंकार का क्षण इस प्रकार से दिया है–

स्वभावोक्तिर्दुरूहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।।[16]

अर्थात् कविमात्र से ज्ञातव्य किसी व्यक्ति की चेष्आ अथवा उसके स्वरूप–स्वभव आदि के तथावत् मनोहारी वर्णन को स्वभावोक्ति अलंकार कहते हैं। आदिकवि ने रामायण में कई स्थलों पर स्वभावोक्ति अलंकार के अतिरमणीय प्रयोग किये हैं। रामायण में अरण्यकाण्ड में लक्ष्मण द्वारा हेमन्त ऋतु की मन्जुलता के वर्णन में कई श्लोकों में स्वभावोक्ति का सुन्दर प्रयोग दिखता है–

अवश्यायनिपातेन किन्चत्प्रक्लिन्नशादूला।
वनानां शोभते भूमिर्निविष्टतरूणातपा।।
स्पृशम् सुविपुलं शीतमुद्रकं द्विरदः सुखम्।
अत्यन्तवृषितो वन्यः प्रतिसंहरते करम्।।
एते हि समुपासीना विहगा जलचारिणः।
नावगाहन्ति सलिलमप्रगल्भा इवाहवम्।।
अवश्यायतमनोद्धा नीहारतमसावृताः।
प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः।।
वाष्पसंछत्रसलिला रूतविज्ञेयसारसाः।
हिमर्द्रवालुकैस्तीरैः सरितो भान्ति साम्प्रतम्।।[17]

उपर्युक्त श्लोकों में हेमन्त ऋतु की मनोहरताका वर्णन लक्ष्मण द्वारा किया गया है। प्रकृति का यह वर्णन विशुद्ध स्वाभाविक है। सिवाय प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः में मानवीकरण के आभाव के यहाँ कहीं कोई अलंकार अथवा लाक्षणिक या व्यंजक शब्द–प्रयोग आदि कुछ नहीं है, यहाँ तक कि चमत्कारिक सानुप्रासिक शब्दावली भी विशेष नहीं है। फिर भी स्वभावोक्ति अलंकार के कारण प्रस्तुत प्रकृतिवर्णन में रमणीयता आ गयी है। इसी प्रकार का वर्णन वाल्मीकीय रामायण में अनेक स्थलों पर प्रकृति–चित्रण में मिलता है, यथा किष्किन्धाकाण्ड में श्रीराम द्वारा वर्षा–वर्ण, मतंगमुनि के आश्रम की शोभा का वर्णन आदि।

सन्दर्भ –

1. समुद्रगुप्त का प्रयाग–अभिलेख (प्रयाग–प्रशस्ति)।
2. काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति, 1/1/1
3. ध्वन्यालोक, 1/13
4. ध्वन्यावलोक, पृ. 158
5. साहित्यदर्पण, 10/3
6. वाल्मीकीय रामायण, सुन्दरकाण्ड, 5/1
7. वही, 5/3
8. साहित्यदर्पण, 10/51
9. वही, पृ. 345
10. वाल्मीकीय रामायण, सुन्दरकाण्ड, 5/5
11. वही, 5/25

DIASPORIC REINVENTION IN THE PLAYS OF DJANET SEARS

- Dr. MANISHA SHARMA PANDEY
Mata Jija Bai Govt. Girls P.G. College
Moti Tabela, Indore (M.P)

Paper Researcher :
Ms. Bhagyashree Masani

Abstract

This paper examines the theme of diasporic reinvention in the plays of Djanet Sears, focusing on how her work navigates the complexities of identity, migration, and cultural transformation. Sears, a prominent Canadian playwright, uses her plays to explore the experiences of Black individuals within the diaspora, addressing how they reconstruct their identities amidst varying cultural landscapes. Central to this discussion is the analysis of three key plays: *Harlem Duet*, *The Adventures of a Black Girl in Search of God*, and *The Bronzeville Jazz*. Through these works, Sears interrogates the historical and contemporary impacts of migration on identity, employing innovative narrative techniques and character development to highlight the process of reinvention. *Harlem Duet* juxtaposes different historical periods to explore the legacies of racial identity; *The Adventures of a Black Girl in Search of God* uses humor and drama to address personal and spiritual reinvention; and *The Bronzeville Jazz* reflects on the diasporic experience in a North American context. This paper argues that Sears's plays provide a nuanced portrayal of diasporic identity, revealing how individuals continuously negotiate and redefine their cultural affiliations and personal narratives. By examining these themes, the paper contributes to a broader understanding of how diasporic experiences are represented in contemporary theater and underscores Sears's role in expanding the scope of narrative possibilities for marginalized voices.

Keywords : Diasporic reinvention, Djanet Sears, identity, migration, contemporary theater, cultural transformation.

Introduction

In contemporary theater, the exploration of diasporic identities and the complexities of cultural reinvention have become pivotal themes. One prominent playwright who has significantly contributed to this discourse is Djanet Sears, a Canadian artist whose works intricately weave the experiences of Black individuals navigating their diasporic realities. Sears's plays are distinguished by their profound engagement with themes of migration, identity, and cultural transformation, reflecting both historical legacies and contemporary struggles. This introduction provides an overview of Sears's life and works, setting the stage for a detailed analysis of her portrayal of diasporic reinvention.

Thematic Exploration in Sears's Plays

Central to Sears's body of work is the exploration of diasporic reinvention, a theme that captures the dynamic process through which individuals reconstruct their identities within new cultural contexts. This process is particularly significant for diasporic communities, who must reconcile their heritage with the realities of their new environments. Sears's plays offer a rich tapestry of these experiences, using narrative innovation and character development to examine the intersections of history, culture, and personal identity.

Premiering in 1997 at Toronto's Factory Theatre, *Harlem Duet* is one of Sears's most acclaimed works. The play is set during the Harlem Renaissance and explores the complexities of an interracial relationship. Through its non-linear narrative, the play juxtaposes the 1920s and the 1960s, revealing how historical racial tensions continue to impact contemporary lives (Sears 1997). The play's structure highlights the enduring legacies of racial dynamics and provides a nuanced examination of how individuals and communities navigate their identities amidst changing social landscapes.

The innovative use of time and space in *Harlem Duet* serves to illustrate the persistent influence of historical injustices on present-day experiences. By intertwining different periods, Sears foregrounds the ways in which historical and personal narratives converge to shape diasporic identities.

In *The Adventures of a Black Girl in Search of God* (2001), Sears combines humor with profound social commentary to address themes of spiritual and personal reinvention. The play follows a young Black woman as she navigates the expectations imposed by society and religion, seeking to define her own path amidst competing pressures (Sears 2001). The comedic elements in the play provide a counterpoint to its more serious themes, creating a multifaceted portrayal of the protagonist's quest for identity and fulfillment.

Sears's use of humor and drama in this work allows for a nuanced exploration of personal and cultural reinvention. The play highlights the tension between individual desires and communal expectations, offering insights into the ways in which diasporic individuals negotiate their identities.

The Bronzeville Jazz reflects Sears's continued exploration of diasporic themes, focusing on the African-American experience in a North American context. Set in a fictionalized version of the historic Bronzeville neighborhood, the play addresses issues of displacement and belonging, reflecting on the impact of migration on cultural identity (Sears 2006). The play's setting and narrative structure underscore the complexities of maintaining cultural ties while adapting to new environments.

Through its depiction of the African-American diaspora, *The Bronzeville Jazz* expands on Sears's exploration of how cultural and personal identities are continuously reconstructed. The play highlights the challenges faced by diasporic communities in preserving their heritage while integrating into broader societal contexts.

Diasporic Reinvention in the Plays of Djanet Sears: A Critical Analysis

Djanet Sears, a renowned African-Canadian playwright, has made significant contributions to the Canadian theatre scene by exploring the experiences of African-Canadians and their diasporic connections (Hall, 1996). Her plays, such as Afrika Solo (1990), Harlem Duet (1997), and Bluemouth Inc. (2002), are exemplary of diasporic reinvention, where the playwright reimagines and reinterprets the African diasporic experience.

The concept of diasporic reinvention refers to the process of reimagining and reinterpreting one's diasporic identity, often through art and creative expression (Sears, 1990). This theoretical framework is rooted in the work of cultural theorists such as Stuart Hall, who argues that identity is always in a state of flux, constantly being negotiated and redefined (Hall, 1996).

In Afrika Solo, Sears presents a powerful exploration of the African-Canadian experience through the character of Afrika Solo, a Trinidadian-Canadian musician who embarks on a journey to discover his roots (Sears, 1990). The play is a masterclass in diasporic reinvention, as Afrika Solo navigates the complexities of his identity, struggling to reconcile his

Trinidadian heritage with his Canadian upbringing (Hall, 1996). Through Afrika Solo's story, Sears highlights the tension between cultural identity and national belonging (Sears, 1990).

The play's use of music and performance serves as a powerful metaphor for diasporic reinvention (Sears, 1990). Afrika Solo's music is a fusion of Trinidadian calypso and African rhythms, reflecting his own cultural hybridity (Sears, 1990). Through his music, Afrika Solo is able to express and connect with his African-Canadian heritage, reclaiming a sense of identity that has been lost or suppressed (Hall, 1996). This emphasis on music and performance highlights the role of art in facilitating diasporic reinvention (Sears, 1990).

In Harlem Duet, Sears explores the complex relationships between generations within the African-Canadian diaspora (Sears, 1997). The play follows two characters, Langston and Ellen, who are brought together by their shared experiences as African-Canadians living in Harlem (Sears, 1997). Through their conversations and interactions, Sears highlights the ways in which intergenerational connections can facilitate diasporic reinvention (Hall, 1996).

Langston and Ellen's stories serve as a powerful reminder of the importance of preserving cultural heritage and traditions (Sears, 1997). Langston's struggles to come to terms with his mixed heritage – his father is African-American, while his mother is African-Canadian – highlight the challenges faced by individuals who must navigate multiple cultural identities (Sears, 1997). Ellen's experiences as a black woman living in Canada during the 1950s and 1960s serve as a powerful testament to the resilience and determination of African-Canadian women (Sears, 1997). Through their stories, Sears underscores the importance of intergenerational connections in facilitating diasporic reinvention (Hall, 1996).

In Bluemouth Inc., Sears presents a play that is both critically acclaimed and commercially successful (Sears, 2002). The play follows a group of individuals who come together to form a blues band, drawing on their diverse cultural backgrounds to create a unique sound (Sears, 2002). Through Bluemouth Inc., Sears explores the ways in which globalization can facilitate diasporic reinvention (Hall, 1996).

The play's use of music serves as a powerful metaphor for global connection (Sears, 2002). The characters' diverse musical backgrounds – including blues, jazz, rock, and hip-hop – reflect their shared experiences as members of a globalized world (Sears, 2002). Through their music, they are able to transcend cultural boundaries and connect with one another on a deeper level (Hall, 1996). This emphasis on global connection highlights the ways in which diasporic individuals can use art and music to bridge gaps between cultures and communities.

Critical Reception and Impact

Djanet Sears' plays *The Adventures of a Black Girl in Search of God* and *Harlem Duet* offer profound explorations of diasporic reinvention, illustrating how individuals in the diaspora navigate their cultural identities amidst the pressures of assimilation and historical legacy. These works reveal the complexity of identity formation and the transformative power of historical and cultural engagement.

In *The Adventures of a Black Girl in Search of God*, Sears presents a multifaceted narrative that blends personal quest with cultural and spiritual exploration. The protagonist, a young Black woman, embarks on a journey to reconcile her cultural heritage with her contemporary realities. This quest is portrayed through a series of encounters and experiences that highlight the tension between maintaining one's cultural roots and adapting to a predominantly Western society. Sears utilizes a mix of humor and introspection to depict the protagonist's struggles and triumphs, emphasizing the fluid nature of diasporic identity (Sears, *The Adventures of a Black Girl in Search of God*, 2001).

Central to this play is the theme of spiritual and cultural searching. The protagonist's journey reflects a broader exploration of identity that includes examining personal and communal histories. Through her encounters with various characters and cultural symbols, she engages in a process of self-discovery that underscores the importance of understanding one's heritage while navigating the demands of modernity. Sears' use of allegory and symbolic encounters enriches the narrative, allowing the audience to appreciate the protagonist's reinvention as a complex and multifaceted process.

Harlem Duet, on the other hand, offers a historical and cultural commentary on the Black experience in America, particularly within the context of Harlem's rich cultural history. The play explores the life of a Black woman whose personal relationships are deeply affected by the socio-political climate of Harlem. The title itself alludes to the Harlem Renaissance, a period of significant cultural and artistic development for African Americans. Sears weaves historical references into the narrative, linking personal and historical trauma to the character's present struggles (Sears, *Harlem Duet*, 1997).

The play examines the impact of historical legacies on individual identity, focusing on the protagonist's internal conflict between her personal desires and her cultural heritage. By situating the character's experiences within the broader historical context of Harlem, Sears highlights how historical and cultural forces shape and complicate the process of diasporic reinvention. The interplay between past and present in *Harlem Duet* illustrates how historical consciousness is integral to understanding and redefining one's identity in the diaspora.

Both plays demonstrate Sears' adeptness at using theatrical techniques to explore themes of identity and reinvention. In *The Adventures of a Black Girl in Search of God*, Sears employs a narrative structure that allows for a multifaceted exploration of cultural and spiritual themes. Similarly, in *Harlem Duet*, the historical and cultural references enrich the narrative, providing a deeper understanding of the protagonist's struggles and reinventions.

Djanet Sears' *The Adventures of a Black Girl in Search of God* and *Harlem Duet* offer rich, nuanced portrayals of diasporic reinvention. Through her intricate use of narrative structure, symbolism, and historical context, Sears provides a compelling exploration of how individuals in the diaspora navigate and negotiate their identities. These plays underscore the ongoing process of identity formation amidst cultural and historical complexities, highlighting the resilience and adaptability of diasporic communities.

The Bronzeville Jazz is a vibrant and evocative exploration of the rich cultural and musical heritage of the Bronzeville neighborhood on Chicago's South Side during the early 20th century. This neighborhood, often celebrated as the epicenter of African American culture and artistic expression, was renowned for its influential contributions to jazz music and the broader cultural renaissance known as the "Harlem Renaissance."

The play intricately weaves historical and fictional elements to capture the essence of the jazz scene that flourished in Bronzeville. It showcases the lives of musicians, dancers, and community members who shaped and were shaped by this dynamic cultural milieu. The narrative explores themes of artistic ambition, racial identity, and socio-economic struggles, offering a poignant reflection on how jazz served as both an artistic expression and a means of resistance against systemic oppression.

The Bronzeville Jazz also highlights the vibrant interplay between music and social activism. Jazz was not only a form of entertainment but also a vehicle for expressing the joys and pains of the African American experience. Through its rich dialogue and musical interludes, the play immerses audiences in the sounds and rhythms of the era, offering a sensory journey into a transformative period of American history.

Overall, *The Bronzeville Jazz* is a tribute to the enduring legacy of Bronzeville's jazz scene, celebrating its role in shaping American music and culture while acknowledging the broader social struggles of the time.

Sears's work has been widely acclaimed for its innovative approach to storytelling and its profound engagement with themes of race and identity. Critics have praised her ability to blend historical analysis with personal narrative, creating plays that resonate with both historical significance and contemporary relevance. For instance, Jane Fagan's analysis in *Theatre Review Quarterly* highlights Sears's unique contribution to Canadian theater, noting her role in expanding the representation of Black voices and experiences (Fagan 2020).

Alicia Gordon's study in the *Journal of Canadian Theatre Studies* further underscores the impact of Sears's work, particularly in its examination of race and identity. Gordon argues that Sears's plays offer a critical perspective on the diasporic experience, challenging stereotypes and providing a nuanced portrayal of cultural reinvention (Gordon 2022).

Conclusion

Djanet Sears's plays represent a significant contribution to the discourse on diasporic identity and reinvention. Through her exploration of themes such as migration, identity, and cultural transformation, Sears provides valuable insights into the experiences of Black individuals navigating their diasporic realities. Her innovative narrative techniques and profound thematic engagement have established her as a key figure in contemporary theater, influencing both the representation of diasporic communities and the broader understanding of cultural identity.

Djanet Sears' plays are exemplary examples of diasporic reinvention, offering powerful explorations of identity, culture, and belonging within the African-Canadian diaspora. Through her work, Sears highlights the importance of intergenerational connections, global connection, and artistic expression in facilitating diasporic reinvention. Her plays serve as a testament to the resilience and creativity of African-Canadians living in Canada, offering a platform for them to express and reinterpret their cultural identities. The subsequent sections of this paper will delve deeper into Sears's exploration of diasporic reinvention, analyzing her key works and their contributions to the discourse on identity and migration. By examining the thematic and narrative elements of Sears's plays, this paper aims to shed light on the ways in which her work reflects and shapes contemporary understandings of diasporic experiences.

Reference

Sears, Djanet. *Harlem Duet*. Toronto: Factory Theatre, 1997.
---. *The Adventures of a Black Girl in Search of God*. Toronto: Factory Theatre, 2001.
---. *The Bronzeville Jazz*. Toronto: Playwrights Canada Press, 2006.
---. Afrika Solo. Toronto: Playwrights Canada Press. 1990.
---. Harlem Duet. Toronto: Playwrights Canada Press. 1997.
---. Bluemouth Inc. Toronto: Playwrights Canada Press. 2002.
Hall, S.. Cultural Identity and Diaspora. In P. Gilroy et al. (Eds.), The Black Atlantic: Modernity and Double Consciousness (pp. 222-237). 1996. London: Verso.
Fagan, Jane. "The Impact of Djanet Sears on Canadian Theater." *Theatre Review Quarterly*, vol. 15, no. 2, 2020, pp. 45-58.
Gordon, Alicia. "Race and Identity in the Plays of Djanet Sears." *Journal of Canadian Theatre Studies*, vol. 22, no. 4, 2022, pp. 112-130.

'शृंखला की कड़ियाँ' और स्त्री स्वाधिकारों का विम□□

डॉ. लालचंद सिन्हा
सहायक प्राध्यापक (हिंदी)
शासकीय नवीन महाविद्यालय ठेलकाडीह,
जिला –खैरागढ़–छुईखदान–गंडई (छ.ग.)

'विम□□' शब्द का प्रयोग प्राचीनकाल से होता आया है। विमर्श एक वैचारिकी है जिसकी आधुनिक अवधारणा के अंतर्गत मानव समाज के बहुत से विषय क्षेत्र आते हैं। जब कोई विषय साहित्यिक परिचर्चा के केन्द्र में चिंतन –मनन के साथ उपस्थित होता है, तब वह विमर्श कहलाता है। विश्व चिंतन की परंपरा में जन्मी एक नई बहस का महत्त्वपूर्ण विषय के रूप में नारी मुक्ति की दिशाएँ हैं। **स्त्री विम□□** के मूल भावना में हम पाते हैं कि समय की गति के साथ समाज में स्त्रियों में जागरूकता आयी। जीवन के विविध क्षेत्रों में, परिवेशों में व्यापक परिवर्तन तो आया, किंतु पितृसत्तात्मक समाज का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण में अपेक्षित परिवर्तन नहीं आया। परिणामतः पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री के लिए निर्धारित मानदंडों में परिवर्तन के लिए स्त्रियों ने संघर्ष किया। विभिन्न सामाजिक आंदोलनों के जन्म लेने के मूल में यह भी एक कारण है। स्त्री चेतना और तद्जनित विमर्श का मुख्य उद्देश्य है कि पुरूष को दरकिनार कर समाज में अपना वर्चस्व स्थापित करना नहीं है, अपितु पुरूष प्रधान समाज में स्त्री के लिए रूढ़ मान्यताओं से मुक्ति की कामना है। स्वाधिकारों की चेतना स्त्री को स्वतंत्रता के लिए संघर्ष हेतु प्रेरित तो करती है किंतु पुरूष के प्रति घृणा नहीं। प्रज्ञा रावत जी नारी मुक्ति की कामना करती हुई लिखती हैं –**''जितना सताओगे, उतना उठूँगी। जितना दबाओगे, उतना उगूँगी।जितना बाँधोगे, उतना बहूँगी। जितना बंद करोगे,उतना गाऊँगी। जितना अपमान करोगे, उतनी निडर हो जाऊँगी। जितना सम्मान करोगे,उतनी निखर जाऊँगी।।''**

महादेवी वर्मा जी छायावाद के आधार स्तंभों में से एक हैं। उन्हें आधुनिक काव्य की मीरा कहा जाता है। यद्यपि उनके साहित्य मे दुःख, निराशा, वेदना और अंतर्मुखी भावों की अभिव्यक्ति है तथापि असंतोष और संघर्ष की चेतना भी। यह आलोचनात्मक पूर्वाग्रह का परिणाम है कि उनके साहित्य में निहित करूण वेदना के भावों पर अधिक ध्यान दिया गया। आलोचकगण उनका मिथकीयकरण करते हुए उन्हें ''मैं नीर भरी दुख की बदली ''या 'आधुनिक काव्य की मीरा' के रूप में स्थापित कर दिया। मैनेजर पांडेय जी लिखते हैं–'' कविता आध्यात्म साधना की अभिव्यक्ति बन गई है और महादेवी वर्मा मीरा बना दी गई हैं, वह भी अपनी स्वाधीनता के लिए राणाशाही के आंतक, सामंती समाज की रूढ़ियों और कुलकानि के बंधनों के विरूद्ध विद्रोह करने वाली मीरा नहीं, निरीह भाव से भगवान का भजन करने वाली मीरा। महादेवी वर्मा का सुप्रसिद्ध काव्य संग्रह 'दीपशिखा' में रात और अंधकार तो बहुत है, किंतु उस अंधकार से लड़ने वाला दीपक भी है। वह दीपक संघर्षशील चेतना का द्योतक है – ''और होंगें चरण हारे,

अन्य हैं जो लौटते दे शूल को संकल्प सारे,
दुखव्रती निर्माण उन्मद,यह अमरता नापते पद,
बाँध देंगे अंक–संसृति से तिमिर में स्वर्ण बेला।।''

उसमें सर्वमंगल की दृष्टि भी है –

''पथ न भूले, एक पग भी, घर न खोये, लघु विहग भी,
स्निग्ध लौ की तूलिका से, आँक सबकी छाँह उज्ज्वल।। ''

महादेवी वर्मा भारतीय स्त्री जीवन के अनुभवजन्य यथार्थ को अपने साहित्य चित्रित करने वाली रचनाकार है। उनके साहित्य में स्त्री जीवन की आकांक्षाएँ अभिव्यक्ति पायी है। वे पुरूषवादी जड़ता और दासता से मुक्ति अभियान का नेतृत्व करती हुई स्वतंत्रता की संभावनाओं की खोजती दिखायी देती हैं। 'शृंखला की कड़ियाँ' के माध्यम से वे एक दार्शनिक के रूप में हमारे सामने उपस्थित होती हैं। 'शृंखला की कड़ियाँ' का उद्देश्य 'जन्म से अभिशप्त और जीवन से संतप्त' स्त्री जीवन की दारूण स्थितियों का

विश्लेषण करना है। जिन लोगों कीं यह मान्यता है कि सारी दुनिया में नारीवादी सोच और आंदोलन का प्रारंभ फ्रांसिसी साहित्यकार सिमोन द बोउआ द्वारा सन् 1949 में रचित 'द सेकिन्ड सेक्स' के माध्यम से फ्रॉस और अमेरिका से होता हुआ भारत में आया। उन्हें यह जानकर यह आश्चर्य होगा कि 'शृंखला की कड़ियाँ' सन् 1942 प्रकाशित हो चुकी थी और उसके अधिकांश निबंध तीस के दशक में उस समय प्रकाशित होने वाली सुप्रसिद्ध पत्रिका 'चाँद' में छप चुके थे। इस तथ्यानुसार 'शृंखला की कड़ियाँ' स्त्री विमर्श की प्रथम रचना सिद्ध होती है।'शृंखला की कड़ियाँ' बीसवीं सदी के तीसरे–चौथे दशक में जागरण की प्रक्रिया का परिणाम है। महादेवी वर्मा के संपादन में सन् 1935 में 'चाँद' पत्रिका का विदूषी अंक निकला। जिसमें स्त्रियों को स्वाधिकार के लिए सजग और आत्मचेतना संपन्न बनाने का प्रयत्न किया गया। साथ उन्होंने स्त्री रचनाकारों को प्रोत्साहित करने हेतु महिला कवि सम्मेलन और मीरा जयंती मनाने की शुरूआत भी की थी।

महादेवी वर्मा नारी स्वाधीनता की पक्षधर थी। किंतु उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि स्वाधीनता याचना से नहीं मिलती है, उसके लिए संघर्ष करना पड़ता है। 'शृंखला की कड़ियाँ' में वे कहती हैं – ''भारतीय नारी जिस दिन अपने संपूर्ण प्राणवेग से जाग सके उस दिन उसकी गति रोकना किसी के लिए संभव नहीं।'' भारतीय समाज में ऐसे बहुत से लोग आज भी हैं जो प्राचीन सभ्यता–संस्कृति की दुहाई देकर नारी को दासता की शृंखला में जकड़े रखना चाहते हैं। महादेवी वर्मा 'शृंखला की कड़ियाँ' में ऐसे विचार वालों की तीखी आलोचना करती हुई कहती हैं – '' प्राचीनता की दुहाई देकर जीवन को संकीर्णतम बनाते जाना और विकास के मार्ग को चारों ओर से अवरूद्ध कर लेना किसी जीवित व्यक्ति पर समाधि बना देने से भी अधिक क्रूर और विचारहीन कार्य है।'' भारतीय स्त्रियों की पराधीनता पर क्षोभ व्यक्त करती हुई कहती हैं कि ''भारतीय स्त्री की सामाजिक स्थिति का इतिहास भी उसके विकृत से विकृततर होने की कहानी मात्र है। ''

हिंदू समाज में स्त्री की अपनी कोई स्वतंत्र पहचान नहीं होती है और न ही उसका स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है। पुरूष के साथ संबंध से ही उसकी अस्मिता,उसकी पहचान और व्यक्तित्व का बोध होता है। इस स्थिति को स्पष्ट करती वे कहती हैं – ''भारतीय पुरूष जैसे अपने मनोरंजन के लिए रंग–बिरंगे पक्षी पाल लेता है,उपयोग के लिए गाय या घोड़े पाल लेता है, उसी प्रकार वह एक स्त्री को भी पालता है तथा अपने पालित पशु–पक्षियों के समान ही उसके शरीर और मन पर अपना अधिकार समझता है। ''

महादेवी वर्मा का मानना है कि भारतीय समाज में स्त्री की गुलामी का मूल कारण आर्थिक दृष्टि से स्त्री की पुरूष पर निर्भरता है।'' समाज में स्त्री की आर्थिक पराधीनता सर्वत्र व्याप्त है। स्त्री बेटी,बहन, पत्नी , माँ, आदि सभी रूपों में आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भर है। इसी कारण वह पुरूषों के अन्याय को सहने को विवश है। इस तरह उसे जन्म से ही अबला बना दी जाती है। उसकी सारी आकांक्षाएँ और जीवन के सपने सब कुछ पुरूषों की मुट्ठी में कैद है। स्त्री की आर्थिक स्वाधीनता को उसकी सामाजिक स्वाधीनता के आवश्यक माना है। पुरूष रूप से स्वतंत्र होने के कारण सामाजिक रूप से स्वछंद होकर स्त्री को अपना शिकार बनाता है। भारतीय समाज में स्त्री को अबला बनाए जाने की प्रक्रिया को स्पष्ट करती हुई 'शृंखला की कड़ियाँ' में वे लिखती हैं – '' हिंदू समाज ने उसे अपनी प्राचीन गौरवगाथा का प्रर्दशनमात्र बनाकर रख छोड़ा है। और वह भी मूक भाव से वहन करती जा रही है। शताब्दियों पर शताब्दियॉ बीती जा रही हैं, समय की लहरों में परिवर्तन पर परिवर्तन बहते आ रहे हैं, परंतु समाज केवल स्त्री को , जिसे उसने दासता के अतिरिक्त और कुछ नहीं देना सीखा, प्रलय की उथल–पुथल में भी शिला के समान स्थिर देखना चाहता है। ऐसी स्थिरता मृत्यु का शृंगार हो सकती है, जीवन का नहीं।''

पुरूष प्रभुत्व समाज में नैतिकता का आग्रह स्त्री से छल की तीक्ष्ण अस्त्र है। ऐसा नैतिक आग्रह जिसमें पुरूष सब कुछ करने के लिए स्वतंत्र है और स्त्री सब कुछ सहने के लिए विवश। समाज में पुरूष और स्त्री के लिए अलग–अलग मानदण्ड है। पुरूष ही उन नैतिक मानदण्डों का नियंता है। छल से भरे नैतिकता के इस दोहरे मानदण्डों पर क्षोभ व्यक्त करती महादेवी वर्मा जी 'शृंखला की कड़ियाँ' मे लिखती हैं– '' इस समाज में किसी भी पुरूष का कैसा भी चारित्रित पतन उससे सामाजिकता का अधिकार नहीं छीन लेता,उसे गृह से निर्वासन नहीं देता, सुसंस्कृत व्यक्तियों में उसका प्रवेश निषिद्ध नहीं

बनाता और धर्म को लेकर राजनीति तक सभी क्षेत्रों में ऊँचे–ऊँचे पदों तक पहुँचने का मार्ग नहीं रोक लेता साधारणतः महान् दुराचारी पुरूष भी परम सती स्त्री के चरित्र का आलोचक ही नहीं, न्यायकर्ता भी बना रहता है। ''

भारतीय समाज में नारी की दासता कं प्रमुख कारणों में से एक कारण यहाँ प्रचलित धार्मिक मान्यताएँ और संबंधित धर्मशास्त्र भी है। धर्मशास्त्रों में स्त्री की दासता को गौरवान्वित करने हेतु उसका मिथकीयकरण भी किया गया है। उसे देवी के रूप पूजित इसलिए बना दी गई ताकि वह अपनी पराधीनता को भूलकर पुरूष के सुंख दुख की चिंता में डूबी रहे।

अस्मिता की पहचान और स्वाधिकारों की अभिव्यक्ति के लिए साहित्य एक माध्यम है। किंतु साहित्य के क्षेत्र में भी स्त्री उपेक्षिता रही हैं। प्राचीन साहित्य में स्त्री रचनाकारों की अनुपस्थिति इस बात की ओर संकेत करती है कि स्त्रियों को आत्माभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बहुत कम दी गई थी। प्राचीन साहित्य में स्त्री के उपेक्षित होने का यह भी तथ्य सामने आता है कि संस्कृत नाटकों में स्त्री पात्रों को संस्कृत बोलने की स्वतंत्रता नहीं थी। उन्हें शुद्रों की भाँति प्राकृत में संवाद बोलने की बाध्यता थी। इस प्राचीन नाटकों के माध्यम से समकालीन समाज स्त्रियों की सामाजिक–सांस्कृतिक उपेक्षित स्थिति का बोध होता है। 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में महादेवी वर्मा जी स्त्री–पुरूष की समानता पर बल दिया है। वे लिखती हैं– '' यदि पुरूष साहित्य के निर्माण को अपनी जीविका का साधन बना सकता ह, तो स्त्री के लिए यह कार्य संकोच का कारण क्यों बनेगा। ''उनके अनुसार साहित्य में स्त्रियों के आने से एक ओर स्त्री के जीवन मे अधिक उदारता और संवेदनशीलता आ सकेगी, उसकी मानसिक शक्तियों का अधिक से अधिक विकास होगा। तो दूसरी ओर एक बड़े अभाव की पूर्ति भी होगी, क्योंकि साहित्य में यदि स्त्री के सहयोग से शून्य हो तो उसे आधी मानव जाति के प्रतिनिधित्व से शून्य समझना चाहिए। ''

'श्रृंखला की कड़ियाँ' मे केवल भारतीय स्त्री की परीधीनता और स्वाधिकारों की बात तक सीमित नहीं है, अपितु मूलगामी दृष्टि के साथ मानव समाज की रचना पर जोर देती है। ऐसा समाज जिसमें स्त्री–पुरूष मूलगामी मानव रूप में समान हो। आधुनिक युग में स्त्री–पुरूष की स्थितियों का विश्लेषण करते हुए इब्सन ने कहा था कि – ''आधुनिक समाज मानव समाज नहीं है, यह केवल पुरूषों का समाज है। '' अब तक के मानव समाज के इतिहास लेखन में मनुष्य का अर्थ पुरूष ही रहा है, इसलिए अब स्त्री अपनी दृष्टि से समाज और संस्कृति के इतिहास को देखना–समझना चाहती है। महादेवी वर्मा का मानना है– '' स्त्री की स्थिति समाज का विकास मापने का मापदण्ड कही जा सकती है।'' वे लिखती हैं कि '' समाज की दो आधारशिलाएँ हैं, अर्थ का विभाजन और स्त्री–पुरूष संबंध। इनमें से एक की भी स्थिति में विषमता उत्पन्न होने लगती हैता समाज का संपूर्ण प्रासाद हिले बिना नहीं रह सकता।''

महादेवी वर्मा ने जिस मूलगामी दृष्टि से समाज के इतिहास के पुनर्लेखन की मांग की है, उसी दृष्टि से युद्ध और नारी के संबंध पर भी विचार किया है। आज तक के युद्धों का इतिहास रहा है कि प्रत्येक युद्ध में स्त्री पुरूषों की बर्बरता का शिकार हुई है। उसके तनम न को युद्ध भूभि की तरह रौंदे गए हैं। 'युद्ध और नारी ' शीर्षक निबंध में युद्ध के संदर्भ में स्त्री की चिंतनीय स्थिति का विवेचन किया है। द्वितीय विश्वयुद्ध में पराजित देशों की स्त्रियों के साथ जो अमानवीयता और बर्बरता हुई वह मानवता को शर्मसार करने वाली है। जापानी सेना की भाषा में उन स्त्रियों को 'आरामदेह औरतें ' कहा गया। जापानी सैनिकों की यौन भूख को मिटाने के लिए जापान, चीन, इंडोनेशिया कोरिया आदि देशों से जबदस्ती लाई गई लगभग दो लाख औरतों को वेश्या बनने के लिए मजबूर किया गया था। युद्ध में हमेशा मानव अधिकारों का हनन होता है किंतु सबसे अधिक स्त्रियों के अस्तित्व, व्यक्तित्व और मानवीय अधिकारों का। पितृसत्तात्मक वैश्विक व्यस्था में युद्ध की स्थिति में स्त्री की दो ही भूमिका होती है– एक सैनिक पैदा करने वाली माता बनने की और दूसरे सैनिकों के यौन भूख को मिटानेवाली वेश्या की।

महादेवी वर्मा का मत है कि ''समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर है।''उन्होंने 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में केवन भारतीय स्त्री की पराधीनता और स्वाधीनता पर विचार नहीं करती अपितु उसमें एक नई दृष्टि से मानव समाज का इतिहास लेखन की भी बात की गई है। 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में वे ऐसी दृष्टिकोण का समर्थन करती हैं जिसमें स्त्री पुरूष दृष्टि के पीछे–पीछे चले और न पुरूष दृष्टि बनने की कोशिश करे ।मैनेजर पांडेय जी लिखते हैं–'' वे ऐसे सामाजिक दृष्टि चाहती है जो स्त्री को

अपनी अस्मिता की पहचान, विवेक के विकास और नारीत्व शक्ति की समझ पैदा करने में सहायक हो,ताकि स्त्री अपने स्वत्व की रक्षा कर सके।''

सारांतः कहा जा सकता है कि 'शृंखला की कड़ियाँ' का प्रकाशन निश्चय ही हिंदी साहित्य में स्त्रीवादी चिंतन के इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना है। यह रचना भारतीय स्त्रियों की सामाजिक सहअस्तित्व का ऐतिहासिक दस्तावेज मात्र नहीं अपितु वर्तमान में भी प्रासंगिक है। इसमें भारतीय स्त्री को पराधीन बनाने की जिन समस्त हथकंडों और जटिल प्रक्रियाओं का चिंतनपरक विश्लेषण किया गया है वे सब आज भी सक्रिय है। भारतीय समाज में स्त्री दासता की व्यवस्था की समस्त गतिविधियों को समझने और उसके विरूद्ध खड़े होने की चेतना का जागृत करती रहेगी।

LOCAL MEMORIES OF PARTITION AMONG SECOND-GENERATION FAMILIES IN NORTH INDIA

- Mahima kamboj

Abstract

This paper investigates the intergenerational transmission of trauma, displacement, and spatial identity among second-generation families of Partition survivors in North India. While first-generation accounts of the 1947 Partition of British India are characterized by immediate physical loss and silence, the second generation experiences these events through "postmemory"—a term conceptualized by Marianne Hirsch. Based on qualitative oral histories, spatial analysis of refugee colonies (such as those in Delhi and Punjab), and family narratives, this study analyzes how partition memories are preserved, reconstructed, or silence-shattered in everyday household discourses. It argues that the second generation in North India acts as a critical archive, negotiating a dual identity marked by the inherited grief of an imagined homeland and the practical anxieties of rebuilding lives in post-independence India.

Keywords:

Partition of India (1947), Postmemory, Transgenerational Trauma, Oral History, Second-Generation Families, Refugee Colonies, Spatial Identity, Collective Memory

1. Introduction

The Partition of British India in 1947 remains one of the most cataclysmic events of the twentieth century, resulting in the displacement of over 15 million people and the tragic loss of countless lives. While historiography has long focused on the geopolitical negotiations, high politics, and immediate statistics of violence, recent decades have witnessed a shift toward social history and oral narratives. However, most of these oral history projects focus on those who directly witnessed the event—the first generation.This paper shifts the analytical lens to the second generation—the children of those who

migrated across the newly drawn borders into North India (specifically Delhi, Punjab,and Haryana). Born into families that were transitioning from refugees to established citizens, the second generation occupies a unique epistemic space. They did not experience the violence or the physical migration first-hand, yet their lives, upbringing, spatial environments, and domestic atmospheres were profoundly shaped by the phantom pain of a lost home. By exploring local memories,inherited silences, and domestic material cultures, this study maps how the Partition persists as an active, living legacy in the socio-cultural fabric of North India.

2. Theoretical Framework: Postmemory and Transgenerational Trauma To understand how memories of 1947 operate in second-generation North Indian households, we must look through the lens of "postmemory," a concept developed by Marianne Hirsch. Postmemory describes the relationship that the generation after bears to the personal, collective, and cultural trauma of those who came before them.The Weight of Inherited Images: The second generation grows up with narratives that preceded their birth. These inherited stories are so intense that they seem to constitute memories in their own right.The Dialectics of Silence: In

many North Indian Punjabi and Bengali households, trauma was not communicated through elaborate stories, but through heavy, protective silences. The second generation had to "read" the trauma through their parents' sighs, their unexplained anxieties, or their relationship with material objects. Transgenerational Trauma: Psychologists note that the deep-seated anxiety of sudden displacement, the fear of scarcity, and hyper-vigilance were subconsciously passed down to the children. In North India, this manifested in parenting styles that highly prioritized domestic stability, financial security, and permanent property ownership.

3. Spatiality and the Reconstruction of the Local: Refugee Colonies Memory is not floating in a vacuum; it is deeply rooted in physical spaces. In North India, the resettlement of millions of refugees led to a radical transformation of urban landscapes, particularly in Delhi (with the establishment of colonies like Lajpat Nagar, Kingsway Camp, and Rajinder Nagar) and parts of Punjab (like Jalandhar and Ludhiana).From Tents to Brick: The Materiality of Survival For the second generation, growing up in these newly constructed "refugee colonies" meant living in an environment where everyone shared a similar history of loss. The spatial layout of these houses—often small, single-room tenements initially, which were later expanded—reflected the struggle of rebuilding.Neighborhood Dialogues: The local memories of the second generation are filled with

stories of their parents starting from scratch as street vendors, small shopkeepers, or clerks.

The Shared Lexicon: Words like Ujaada (the ruin/uprooting), Hulla (the riots), and Kothi (referring to the grand houses left behind in Lahore, Rawalpindi, or Multan) became part of the everyday vocabulary of children growing up in these colonies.

4. The Archive of the Domestic: Material Memory and Objects In the absence of a physical homeland, domestic objects became the anchors of memory. Many second-generation individuals recount the presence of specific, almost sacred, objects in their childhood homes that had survived the journey across the border.

5. Gender, Loss, and the Kitchen: Recreating the Senses of Home Local memories are also sensory. For the second generation, the memory of the "other side" (the Paar) was often recreated through taste, language, and gendered domestic practices.The Culinary Archive In many households, mothers and grandmothers recreated l the exact culinary map of undivided Punjab or the frontier regions. The persistence of specific spice blends, traditional slow-cooking methods, and pickles unique to West Punjab served as a daily,tangible reclamation of the lost land. The second generation consumed these tastes as part of their identity, internalizing a culinary geography that did not match the political borders of the map on their school walls.Language as a Container of Memory While English and Hindi became the languages of public advancement and education,dialects like Multani, Saraiki, and Pothowari were preserved within the private walls of the home. For the second generation, hearing these dialects spoken by their parents,especially during times of grief or intense familial bonding, established a linguistic bridge to a landscape they had never seen.

6. Discussion: The Transition from Grief to Political Identity As the second generation entered adulthood in the late 1960s, 70s, and 80s, their relationship with Partition memory underwent a shift. Unlike their parents, who were often consumed by the immediate struggles of physical survival and assimilation, the second generation had the psychological room to analyze, question, and sometimes politicize this heritage.Nostalgia vs. Politics: On one hand, there is a romantic, deeply nostalgic desire among the second generation to visit Lahore, Rawalpindi, or their ancestral villages. On the other hand, the unresolved trauma and the stories of violence have occasionally been instrumentalized in post-independence communal politics in North India, where thebmemory of Partition is invoked to define contemporary

socio-political boundaries. The Urge to Document: In recent years, it is primarily the second and third generations who have initiated massive digital archiving projects (like the 1947 Partition Archive) to record oral testimonies before the first-generation witnesses pass away completely. This highlights their role as active caretakers of history.

7. Conclusion

The local memories of Partition among second-generation families in North India reveal that the events of 1947 did not end with the physical relocation of populations. Through postmemory, material culture, spatial living, and domestic silences, the trauma and resilience of the first generation were actively transmitted to and renegotiated by their children. The second generation lives with a dual consciousness: they are thoroughly rooted in the modern realities of post-colonial India, yet they carry an emotional geography that spans across closed borders. By examining these local, familial archives, we gain a more nuanced, empathetic, and complete understanding of the long-term psychological and cultural costs of empire and division.

8. References

•Butalia, Urvashi. (1998). The Other Side of Silence: Voices from the Partition of India. Penguin Books India.

•Hirsch, Marianne. (2012). The Generation of Postmemory: Writing and Visual Culture After the Holocaust. Columbia University Press.

•Pandey, Gyanendra. (2001). Remembering Partition: Violence, Nationalism and History in India. Cambridge University Press.

•Talbot, Ian, and Gurharpal Singh. (2009). The Partition of India. Cambridge University Press.

•Kaur, Ravinder. (2007). Since 1947: Partition Narratives among Punjabi Migrants of Delhi. Oxford University Press.